ICN: H-248/2026

मेरा गाँव मेरा गौरव

संतुलित उर्वरक उपयोग अभियान

भाकृअनुप
ICAR

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली-110012

ICN: H-248/2026

मेरा गाँव मेरा गौरव

संतुलित उर्वरक उपयोग अभियान

भाकृअनुप
ICAR

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली-110012

मार्गदर्शन एवं सलाह

डॉ सीएच. श्रीनिवास राव, निदेशक, भाकृअनुप-भा.कृ.अनु.सं.
डॉ रवीन्द्र पडारिया, संयुक्त निदेशक (प्रसार), भाकृअनुप-भा.कृ.अनु.सं.
डॉ पी. एस. ब्रह्मानंद, परियोजना निदेशक, जल प्रौद्योगिकी केन्द्र

संकलन एवं संपादन

डॉ संजय सिंह राठौर
डॉ ए.के. सिंह
डॉ एस. चक्रवर्ती
डॉ प्रतिभा जोशी
डॉ पुनीता पी.
श्री आनंद विजय दुबे
डॉ परगट सिंह
श्री मुकुल देव

उद्धरण : संजय सिंह राठौर, ए.के. सिंह, एस. चक्रवर्ती, प्रतिभा जोशी, पुनीता पी., आनंद विजय दुबे, परगट सिंह, मुकुल देव (2026). संतुलित उर्वरक उपयोग अभियान। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली। पृष्ठ संख्या 42.

© भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली – 110012
ICN: H-248/2026

सी.एस.आर.-मारुती परियोजना, सस्य विज्ञान संभाग द्वारा प्रायोजित

प्रकाशन : भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली – 110012
वर्ष : 2026

प्राक्कथन

भारतीय कृषि वर्तमान समय में एक ऐसे परिवर्तनशील दौर से गुजर रही है, जहाँ उत्पादन वृद्धि के पारंपरिक दृष्टिकोण से आगे बढ़ते हुए अब सतत कृषि, संसाधन संरक्षण तथा पर्यावरणीय संतुलन को समान रूप से महत्व दिया जा रहा है। हरित क्रांति के पश्चात देश ने खाद्यान्न उत्पादन में उल्लेखनीय उपलब्धियाँ प्राप्त कीं, किंतु इसके साथ-साथ रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक एवं असंतुलित उपयोग की प्रवृत्ति भी विकसित हुई। विशेष रूप से नाइट्रोजन उर्वरकों के एकपक्षीय प्रयोग ने मृदा की उर्वरता, सूक्ष्म पोषक तत्व संतुलन, जैविक कार्बन स्तर तथा मृदा की जैविक सक्रियता को प्रभावित किया है। इसके परिणामस्वरूप उत्पादन की स्थिरता में कमी, भूमि क्षरण, जल प्रदूषण तथा पर्यावरणीय असंतुलन जैसी समस्याएँ उभरकर सामने आई हैं।

इन्हीं चुनौतियों के समाधान के रूप में संतुलित उर्वरक उपयोग की अवधारणा विकसित हुई है, जो यह प्रतिपादित करती है कि कृषि उत्पादन को केवल उर्वरकों की अधिक मात्रा के माध्यम से नहीं, बल्कि वैज्ञानिक, संतुलित एवं आवश्यकता-आधारित पोषक तत्व प्रबंधन के माध्यम से बढ़ाया जा सकता है। संतुलित उर्वरक उपयोग का आशय केवल NPK उर्वरकों के उचित अनुपात से नहीं है, बल्कि इसमें द्वितीयक एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ-साथ जैविक स्रोतों जैसे गोबर खाद, कम्पोस्ट, वर्मी-कम्पोस्ट, हरी खाद, फसल अवशेष तथा जैव उर्वरकों का समन्वित उपयोग भी सम्मिलित है। यह दृष्टिकोण मृदा को एक जीवंत तंत्र के रूप में स्वीकार करता है, जिसमें भौतिक, रासायनिक एवं जैविक घटकों का संतुलन कृषि उत्पादन की गुणवत्ता और दीर्घकालिक स्थिरता को निर्धारित करता है।

यह प्रकाशन, "संतुलित उर्वरक उपयोग अभियान", भा कृ अनु प - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में संचालित "मेरा गांव मेरा गौरव" कार्यक्रम के अंतर्गत तैयार किया गया है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य वैज्ञानिक अनुसंधान एवं आधुनिक कृषि तकनीकों को सीधे किसानों तक पहुँचाना, स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप समाधान प्रदान करना तथा कृषि को अधिक लाभकारी एवं टिकाऊ बनाना है। इसके माध्यम से वैज्ञानिकों द्वारा गांवों को गोद लेकर मृदा परीक्षण, पोषक तत्व प्रबंधन, जैविक संसाधनों के उपयोग तथा उन्नत कृषि पद्धतियों का प्रत्यक्ष प्रदर्शन किया जाता है, जिससे किसानों में जागरूकता और व्यवहार परिवर्तन को प्रोत्साहन मिलता है।

इस प्रकाशन में संतुलित उर्वरक उपयोग की अवधारणा को एक समग्र कृषि प्रणाली के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जिसमें समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन, स्थल-विशिष्ट पोषक तत्व प्रबंधन, मृदा स्वास्थ्य संरक्षण, फसल विविधीकरण, जैविक एवं प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग तथा कृषि अवशेष प्रबंधन जैसे प्रमुख आयाम सम्मिलित हैं। यह रेखांकित किया गया है कि केवल रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता से मृदा की दीर्घकालिक उर्वरता बनाए रखना संभव नहीं है, अतः जैविक एवं प्राकृतिक स्रोतों का समावेश अनिवार्य है। वर्तमान वैश्विक संदर्भ में जलवायु परिवर्तन, भूमि क्षरण, जल संसाधनों की कमी तथा पर्यावरणीय प्रदूषण जैसी चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए संतुलित उर्वरक उपयोग को जलवायु-स्मार्ट कृषि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह पोषक तत्वों की हानि को कम करने, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को नियंत्रित करने तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में सहायक है। यह प्रकाशन कृषि को एक समग्र पारिस्थितिक तंत्र के रूप में स्थापित करता है, जिसमें मृदा, जल, पौधों, सूक्ष्मजीवों एवं मानव क्रियाकलापों के बीच संतुलन आवश्यक है। अतः संतुलित उर्वरक उपयोग को एक समग्र कृषि दर्शन के रूप में अपनाना आवश्यक है, जो उत्पादन, पर्यावरण एवं आर्थिक लाभ के बीच संतुलन स्थापित करता है। साथ ही, इसकी सामग्री को इस प्रकार व्यवस्थित किया गया है कि यह विद्यार्थियों, शोधार्थियों, कृषि वैज्ञानिकों एवं विस्तार कार्यकर्ताओं के लिए एक उपयोगी, सरल एवं व्यावहारिक संदर्भ सामग्री के रूप में कार्य कर सके।

अंततः, यह प्राक्कथन इस विश्वास के साथ प्रस्तुत किया जा रहा है कि संतुलित उर्वरक उपयोग की अवधारणा को व्यापक स्तर पर समझना और अपनाना भारतीय कृषि को अधिक सतत, उत्पादक, पर्यावरण-अनुकूल एवं किसान हितैषी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। यह केवल एक तकनीकी सुधार नहीं, बल्कि कृषि के प्रति हमारी सोच, नीति और व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन लाने का माध्यम है, जो आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित और समृद्ध कृषि प्रणाली की आधारशिला रख सकता है।

संपादक मंडल

विषय सूची

क्र.	शीर्षक	आलेख	पेज नं.
1.	उच्च उत्पादकता हेतु सतत कृषि पद्धतियाँ	डॉ. सीएच. श्रीनिवास राव	1
2.	संतुलित उर्वरक उपयोग अभियान: टिकाऊ कृषि की ओर एक वैज्ञानिक पहल	रवींद्र पडारिया, प्रतिभा जोशी, सर्वाशिस चक्रवर्ती एवं पुनीता पी	5
3.	मिट्टी के स्वास्थ्य का आकलन करने के लिए एक किसान - अनुकूल विधि	देबाशीष मंडल	10
4.	फसलों में संतुलित पोषण के लिए किण्वित जैविक खाद (FOM): समृद्ध मृदा, बढ़ती आय और पर्यावरण संतुलन की ओर एक प्रभावी पहल	संजय सिंह राठौर, राजीव कुमार सिंह. कपिला शेखावत, सुभाष बाबू, प्रवीण उपाध्याय, ऋषि राज, विशाल त्यागी, मोना, मुकेश यादव, शिला नील, अनु नवहाल एवं अंकित राजावत	13
5.	मृदा परीक्षण के लिए मृदा नमूना लेने की तकनीकें	प्रसेनजीत राय, एम.सी. मीना एवं देबाशीष मंडल	16
6.	समन्वित पोषण प्रबंधन एवं मृदा स्वास्थ्य कार्ड	बिराज बंधु बसाक एवं देबाशीष मंडल	18
7.	पूसा एस.टी.एफ.आर. मीटर : डिजिटल पोर्टेबल मात्रात्मक - किसानों के द्वार मृदा परीक्षण सेवा	देबरूप दास, मंदिरा बर्मन, एम.सी. मीना, डी. मंडल एवं वी.के. शर्मा	20
8.	कृषि अवशेष प्रबंधन के लिए पूसा डिकंपोजर तकनीक और एस.ओ.पी.	लिवलीन शुक्ला, डोलमानी अमात, संदीप कुमार सिंह, बृजेश कुमार मिश्र, कृष्णाशीष दास एवं राधा प्रसन्ना	21
9.	पूसा जैव उर्वरक : फसलों में एकीकृत पोषक प्रबंधन के लिए एक प्रभावी पर्यावरण-हितैषी विकल्प	बृजेश कुमार मिश्र, कृष्णाशीष दास एवं राधा प्रसन्ना	23
10.	पूसा माइकोराइजा : आपकी फसल का प्राकृतिक साथी	सीमा सांगवान	24
11.	जैविक खाद बनाने की उन्नत तकनीकें	शिवा धर एवं रणबीर सिंह	25
12.	प्राकृतिक खेती	दिबाकर महन्त, ऋषि राज, संजय सिंह राठौर एवं शिवा धर	28
13.	प्राकृतिक खेती में पोषक तत्व प्रबंधन और जैविक कीट नियंत्रण: एक समग्र एवं टिकाऊ कृषि दृष्टिकोण	गौरव पपनै, राजीव कुमार सिंह, बिजय कुमार नंदा, भरत सिंह	31
14.	उच्च आय और पर्यावरणीय स्थिरता के लिए फसल विविधीकरण	सुभाष बाबू, कपिला शेखावत, संजय सिंह राठौर एवं ऋषभ सिंह	36
15.	पूसा संस्थान द्वारा विकसित धान की उन्नत प्रजातियाँ	गोपाल कृष्णन एस., पी.के. भौमिक, के.के. विनोद, हरिता बी., आर.के. एल्लूर एवं आर.सेठ	39
16.	पूसा संस्थान द्वारा विकसित खरीफ फसलों की उन्नत प्रजातियाँ – बाजरा, अरहर, मूंग एवं सोयाबीन	**बाजराः** एस.पी. सिंह, एन. सिंह एवं सी. कपूर, **अरहरः** आर.एस. राजे, रामप्रभात जी. एवं कुमार दूर्गेश; **मूँगः** एच.के. दिक्षित, डी. सिंह, जी.पी. मिश्र, एम. अस्की एवं एस. गुप्ता; **सोयाबीनः** एस.के. लाल, ए. तालुकदार, अम्बिका आर. एवं एम. सैनी	41

उच्च उत्पादकता हेतु सतत कृषि पद्धतियाँ

डॉ. सीएच. श्रीनिवास राव
निदेशक, भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

कृषि ने दस हजार वर्षों से अधिक समय से मानव समाजों का भरण-पोषण किया है, और अर्थव्यवस्थाओं, संस्कृतियों और भूदृश्यों को इस प्रकार आकार दिया है जिसे हम अक्सर स्वाभाविक मान लेते हैं। हालांकि, समकालीन युग में कृषि उत्पादन के तीव्रीकरण ने गहरे पारिस्थितिक और सामाजिक दुष्प्रभाव उत्पन्न किए, इससे प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण पर उल्लेखनीय दबाव पड़ता है। सतत कृषि पद्धतियों का उद्देश्य पर्यावरण की रक्षा करना, पृथ्वी के प्राकृतिक संसाधन आधार का विस्तार करना और मृदा की उर्वरता को बनाए रखना और उसमें सुधार करना है। बहु-आयामी लक्ष्यों पर आधारित, सतत कृषि का उद्देश्य लाभदायक कृषि की आय बढ़ाना, पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देना, कृषि परिवारों और समुदायों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार करना और खाद्य और वस्त्र की जरूरतों के लिए उत्पादन बढ़ाना है। सतत कृषि केवल एक कृषि दर्शन नहीं है, बल्कि यह एक अत्यंत प्रासंगिक वैश्विक आवश्यकता है। वर्ष 2050 तक विश्व की जनसंख्या के 9.7 अरब से अधिक होने के अनुमान के साथ, वैश्विक खाद्य प्रणालियों के सामने उत्पादकता बढ़ाने के साथ-साथ उस प्राकृतिक संसाधन आधार के संरक्षण की दोहरी चुनौती है, जिस पर संपूर्ण कृषि निर्भर करती है। पारंपरिक कृषि, यद्यपि अल्पावधि में अत्यधिक उत्पादक रही है, इसके परिणामस्वरूप व्यापक मृदा क्षरण, जल प्रदूषण, जैव विविधता में कमी तथा ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन हुआ है। सतत कृषि, कृषि प्रणालियों में पारिस्थितिक सिद्धांतों को एकीकृत करके, कृषि समुदायों के लिए दीर्घकालिक उत्पादकता, पर्यावरणीय स्वास्थ्य और सामाजिक-आर्थिक समानता सुनिश्चित करके इन चुनौतियों का समाधान करती है।

1960 और 1970 के दशक की हरित क्रांति, जिसकी अगुवाई डॉ. नॉर्मन बोरलॉग जैसे वैज्ञानिकों ने की, ने उच्च उपज वाली फसल किस्मों, रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों तथा व्यापक सिंचाई अवसंरचना के उपयोग के माध्यम से वैश्विक खाद्य उत्पादन में आमूलचूल परिवर्तन किया। भारत में हरित क्रांति के जनक प्रो. एम.एस. स्वामीनाथन ने बाद में 'सदाबहार क्रांति' की अवधारणा प्रस्तुत की, जिसका उद्देश्य पारिस्थितिक क्षति पहुँचाए बिना निरंतर उत्पादकता में वृद्धि करना था। औद्योगिक कृषि के प्रमुख प्रतिकूल परिणामों में कृषि एवं पारिस्थितिक जैव विविधता में तीव्र गिरावट शामिल है। उच्च उपज वाली सीमित फसल किस्मों के व्यापक प्रसार के कारण सदियों से विकसित अनेक स्वदेशी फसल किस्में विस्थापित हो गईं, जिनमें सूखा सहनशीलता, कीट प्रतिरोधकता तथा उच्च पोषण जैसे महत्वपूर्ण आनुवंशिक गुण विद्यमान थे।

हालांकि, पारंपरिक जुताई पद्धतियों के परिणामस्वरूप मृदा में जैविक कार्बन का बड़ी मात्रा में वायुमंडल में उत्सर्जन होता है, जो वैश्विक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में महत्वपूर्ण योगदान देता है। बार-बार गहरी जुताई, फसल अवशेषों का दहन तथा अनुपयुक्त भूमि उपयोग के कारण मिट्टी की संरचना प्रभावित होती है, कार्बनिक पदार्थों का अपघटन तीव्र हो जाता है और संचित कार्बन ऑक्सीकरण के लिए उजागर हो जाता है। इसके अतिरिक्त, लवणता और सोडियम की अधिकता भी एक गंभीर समस्या है; सिंचित मिट्टी में सोडियम लवणों के संचय ने भारत के कई क्षेत्रों में पूर्व में उपजाऊ कृषि भूमि को अनुपजाऊ बना दिया है। ये परस्पर संबंधित समस्याएँ उत्पादन प्रणालियों की अंतर्निहित अस्थिरता को दर्शाती हैं, जहाँ दीर्घकालिक पारिस्थितिक संतुलन की अपेक्षा अल्पकालिक उत्पादकता को प्राथमिकता दी जाती है। अतः सतत कृषि पद्धतियों का अपनाया जाना केवल पर्यावरणीय दृष्टिकोण से ही नहीं, बल्कि खाद्य सुरक्षा, ग्रामीण आजीविका और समग्र पारिस्थितिक स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत आवश्यक है।

सतत कृषि के लाभ

सतत कृषि से मृदा स्वास्थ्य, जैव विविधता, जल संरक्षण, जलवायु परिवर्तन के प्रति प्रतिरोधक क्षमता तथा खाद्य गुणवत्ता सहित अनेक मापनीय लाभ प्राप्त होते हैं। ये सभी लाभ सामूहिक रूप से खाद्य उत्पादन प्रणालियों की दीर्घकालिक स्थिरता को सुदृढ़ करते हैं तथा रासायनिक रूप से निर्भर कृषि पद्धतियों से हटकर पुनर्योजी और पारिस्थितिक रूप से एकीकृत कृषि मॉडलों की ओर अग्रसर को उचित ठहराते हैं। मृदा स्वास्थ्य कृषि उत्पादकता का मूलभूत आधार है, और सतत कृषि इसके संरक्षण एवं पुनर्स्थापन को प्राथमिकता देती है। आवरण फसलें उगाना, खाद निर्माण, न्यूनतम जुताई तथा जैविक पदार्थों का मृदा में समावेशन जैसी पद्धतियाँ मृदा संरचना, सरंध्रता और एकत्रीकरण में सुधार करती हैं। बेहतर मृदा संरचना से वायु संचार और जड़ों का अंदर जाना बढ़ता है, जबकि जैविक पदार्थों की मात्रा बढ़ने से धनायन विनिमय क्षमता और पोषक तत्वों की उपलब्धता में सहायता मिलती है। कृत्रिम उत्पादक सामग्री के बजाय जैविक प्रक्रियाओं के माध्यम से मृदा उर्वरता को बहाल करके, सतत कृषि उत्पादन गुणवत्ता बनाए रखते

हुए उत्पादक सामग्री लागत को कम करती है। एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन, फसल चक्र और कृषि वानिकी से कृषि आय में विविधता आती है, वार्षिक उपज परिवर्तनशीलता कम होती है और खाद्य उत्पादन की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है, जिससे सतत कृषि दीर्घकालिक रूप से उत्पादकता बढ़ाने वाली रणनीति बन जाती है। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) ने वैश्विक कृषि क्षेत्र को अधिक से अधिक उत्पादक और टिकाऊ बनाने के लिए पांच बुनियादी सिद्धांत स्थापित किए हैं, जिसमें संसाधनों के उपयोग में दक्षता में सुधार करना, ग्रामीण जीवनशैली और सामाजिक कल्याण की रक्षा और सुधार करना, जिम्मेदार और प्रभावी शासन तंत्र, लोगों, समुदायों और पारिस्थितिक तंत्रों के लचीलेपन को मजबूत करना, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण, सुरक्षा और सुधार के लिए प्रत्यक्ष गतिविधियों को बढ़ावा देना शामिल हैं ।

सतत कृषि के उद्देश्य

सतत कृषि पारिस्थितिक, उत्पादक और आर्थिक आयामों पर एक साथ काम करती है, और नीचे दिए गए उद्देश्य इस व्यापकता को दर्शाते हैं:

1) मृदा कार्बन पृथक्करण: बिना जुताई वाली खेती, आवरण फसलें और बायोचार का प्रयोग मृदा जैविक कार्बन के स्तर को बहाल करते हैं। बढ़ा हुआ जैविक कार्बन मृदा की उर्वरता और संरचना में सुधार करता है, साथ ही वायुमंडलीय कार्बन डाईऑक्साइड को अवशोषित करता है, जो जलवायु परिवर्तन को कम करने में योगदान देता है। जैविक कार्बन से भरपूर मृदा अधिक नमी बनाए रखती है और समृद्ध सूक्ष्मजीव समुदायों का समर्थन करती है, जिससे व्यापक पारिस्थितिक और कृषि संबंधी लाभ बढ़ते हैं।

2) मृदा जीव विज्ञान संवर्धन: कीटनाशकों के प्रयोग में कमी और जैविक संशोधनों को बढ़ावा देने से मृदा के जैविक समुदाय जैसे जीवाणु, कवक, प्रोटोजोआ, नेमाटोड और केंचुए का पोषण होता है। सहजीवी संबंध नेटवर्क पोषक तत्वों और जल के अवशोषण को सुगम बनाते हैं, नाइट्रोजन स्थिरीकरण जीवाणु संबंधी उर्वरक पर निर्भरता को कम करते हैं और अपघटक जीव पोषक तत्वों के चक्रण को गति देते हैं, ये सभी मिलकर दीर्घकालिक मृदा उत्पादकता को बनाए रखते हैं।

3) सूखा निवारण: सतत प्रबंधन द्वारा समृद्ध की गई मिट्टी में जैविक पदार्थों की मात्रा अधिक होने और बेहतर संरचना के कारण जल धारण क्षमता बढ़ जाती है। बेहतर जल प्रतिधारण शुष्क मौसम में फसलों पर पानी के दबाव को कम करता है, अनियमित वर्षा से होने वाले उपज के नुकसान को कम करता है और सिंचाई पर निर्भरता को घटाता है। मल्चिंग और कंटूर फार्मिंग से सतही अपवाह कम होता है और मिट्टी में जल का रिसाव बेहतर होता है।

4) फसल की गुणवत्ता में सुधार: सतत प्रबंधन के तहत उगाई गई फसलों में विटामिन, खनिज, एंटीऑक्सीडेंट और फाइटोन्यूट्रिएंट्स अधिक मात्रा में पाई जाती है।कीटनाशक अवशेषों की मात्रा कम होने और संतुलित जैव-उपलब्ध कार्बनिक पोषण से भोजन की सुरक्षा और पोषण मूल्य में वृद्धि होती है, जिससे विश्व स्तर पर संवेदनशील जनसंख्या समूह में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी दूर होती है।

5) मृदा जैव विविधता में वृद्धि: सूक्ष्मजीवों, जीवों और कवक समुदायों को समाहित करने वाली मृदा जैव विविधता ही कृषि पारिस्थितिकी तंत्र को कार्यशील बनाती है, न कि केवल उत्पादन करने तक सीमित रखती है। सतत कृषि पद्धतियाँ, रासायनिक इनपुट को कम करके और जैविक पदार्थों को बढ़ावा देकर, मृदा जीवों की विविधता और बहुतायत को सख्त रूप से बढ़ाती हैं। मिट्टी की जैव विविधता में वृद्धि से पोषक तत्वों का बेहतर चक्रण होता है, रोगजनकों को प्रतिस्पर्धा के माध्यम से बाहर निकालकर रोगों पर बेहतर नियंत्रण होता है और पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति प्रणाली की सहनशीलता बढ़ती है। खेत और भूदृश्य स्तर पर, टिकाऊ पद्धतियाँ पर्यावास संरक्षण, झाड़ियों के संरक्षण और कृषि रसायनों के कम उपयोग के माध्यम से सतह के ऊपर की जैव विविधता को भी बढ़ावा देती हैं, जिससे परागणकर्ताओं, शिकारी कीटों और वन्यजीवों को लाभ होता है, जो एकीकृत कीट प्रबंधन और पारिस्थितिक संतुलन में योगदान करते हैं।

सतत कृषि पद्धतियाँ

मृदा परीक्षण आधारित उर्वरक प्रयोग: मृदा स्वास्थ्य पर आधारित उर्वरक प्रयोग की शुरुआत मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक विशेषताओं के व्यापक मूल्यांकन से होती है। इसमें पीएच, विद्युत चालकता, धनायन विनिमय क्षमता, उपलब्ध स्थूल और सूक्ष्म पोषक तत्व तथा सूक्ष्मजीवों के जैव द्रव्यमान कार्बन जैसे मापदंडों का आकलन किया जाता है, ताकि फसल की वास्तविक मांग

और प्राकृतिक आपूर्ति के बीच के अंतर के आधार पर उचित मात्रा का निर्धारण किया जा सके। मृदा परीक्षण फसल प्रतिक्रिया (STCR) समीकरणों के माध्यम से औपचारिक रूप से अपनाई गई यह सटीक पद्धति, अत्यधिक उर्वरक प्रयोग और उससे जुड़े नाइट्रस ऑक्साइड (एक शक्तिशाली ग्रीनहाउस गैस) के उत्सर्जन को काफी हद तक कम करती है। इस तर्कसंगत रासायनिक प्रबंधन के पूरक के रूप में, गोबर की खाद, वर्मीकम्पोस्ट, कम्पोस्ट और किण्वित जैव-उत्तेजक पदार्थों जैसे जैविक इनपुट का रणनीतिक उपयोग किया जाता है।

समस्याग्रस्त मृदाओं का सुधार: जहाँ लवणीकरण, सोडियम की अधिकता या अम्लता के कारण मृदा अनुत्पादक हो गई हों। सोडियम युक्त मिट्टी को जिप्सम के प्रयोग से सुधारा जाता है, जिसके माध्यम से कैल्शियम विनिमय स्थलों से सोडियम को विस्थापित करता है और बाद में सिंचाई द्वारा मुक्त हुए सोडियम क्लोराइड (NaCl) को मिट्टी से बाहर निकाल दिया जाता है। यह प्रक्रिया ढैंचा (सेस्बानिया एक्यूलेटा) जैसी हरी खादों को मिट्टी में मिलाने से तेज हो जाती है, जो साथ ही साथ जल रिसाव और जैविक गतिविधि को बेहतर बनाती हैं। अम्लीय मिट्टी कैल्साइट या डोलोमाइट के साथ चूना डालने पर प्रतिक्रिया करती है, जो क्षार संतृप्ति को बढ़ाती है, एल्यूमीनियम और मैंगनीज विषाक्तता को कम करती है और 6.0-6.5 का लगभग तटस्थ pH बनाती है, जिसमें अधिकांश पोषक तत्व ग्रहण करने वाले एंजाइम अधिकतम दक्षता पर कार्य करते हैं। खारी मिट्टी के लिए मिट्टी से पोषक तत्वों को बाहर निकालने, उपसतही जल निकासी और प्रेस मड या धान के भूसे के बायोचार जैसे जैविक संशोधनों के संयोजन की आवश्यकता होती है जो परासरण (Osmosis) तनाव को कम करते हैं।

फसल अवशेषों से मृदा स्वास्थ्य का निर्माण: फसल अवशेष प्रबंधन कार्बन चक्रण, मृदा जीवविज्ञान तथा कृषि प्रबंधन के समन्वय का एक महत्वपूर्ण घटक है। जब मृदा की नमी खेत क्षमता के समीप होती है, तब रोटावेटर या डिस्क हल की सहायता से अवशेषों को मृदा में सम्मिलित करने पर यह बायोमास सूक्ष्मजीवों के लिए अपघटन का आधार बन जाता है। निरंतर प्रबंधन के अंतर्गत यह प्रक्रिया लगभग 0.3 मी.ग्रा. कार्बन प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष या उससे अधिक की दर से मृदा के जैविक स्रोतों से प्राप्त कार्बन (SOC) भंडार को क्रमशः बढ़ाती है।

जैविक उर्वरक और एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन: जैविक उर्वरक सतत पोषक तत्व प्रबंधन में, वैज्ञानिक विचारों के अनुसार, सबसे उन्नत उपकरणों में से एक हैं क्योंकि ये उन पोषक तत्वों की आपूर्ति के लिए जैविक प्रक्रियाओं का उपयोग करते हैं जिनके लिए अन्यथा ऊर्जा-गहन औद्योगिक संश्लेषण की आवश्यकता होती है । दलहनी पौधों की जड़ों पर सहजीवी गांठें बनाने वाली राइजोबियम प्रजातियाँ, नाइट्रोजनस एंजाइम कॉम्प्लेक्स के माध्यम से 50-200 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की दर से जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण को बढ़ावा देती हैं, जिसमें प्रति नाइट्रोजन अणु 16 एटीपी की खपत होती है। इससे मेजबान पौधे से प्राप्त प्रकाश संश्लेषण द्वारा पूरी तरह से समर्थित चयापचय निवेश कम हो जाता है। स्लरी विधि, जिसमें बीजों को 10% गुड़ के घोल को चिपकने वाले पदार्थ के रूप में उपयोग करके 200-250 ग्राम इनोक्यूलेंट प्रति 10 किलोग्राम बीज की दर से जैविक उर्वरक के घोल से लेपित किया जाता है, फिर छाया में सुखाकर 24 घंटों के भीतर बोया जाता है, सबसे व्यापक रूप से प्रचलित तकनीक है, हालांकि रॉक फॉस्फेट और गोंद अरबी (बाबुल के गोंद) बाइंडर के साथ पेलेटिंग पराबैंगनी विकिरण और शुष्कीकरण के खतरों से बेहतर सुरक्षा प्रदान करती है।

दलहन की अंतर-फसल या फसल चक्र: अनाज आधारित फसल चक्र और अंतर-फसल प्रणालियों में दलहन फसलों को एकीकृत करना, बाहरी इनपुट के बिना मृदा नाइट्रोजन संवर्धन के लिए सबसे शक्तिशाली कृषि रणनीतियों में से एक है। राइजोबियम सहजीवन से प्रत्यक्ष बायोएनएफ (जैविक नाइट्रोजन स्थिरीकरण) योगदान के अलावा, दलहन अगली अनाज फसल पर अवशिष्ट नाइट्रोजन प्रभाव डालते हैं, जो जड़ पुनर्चक्रण, नोड्यूल अपघटन और पत्ती अवशेष अपघटन के कारण होता है। इससे लगातार अनाज की एकल खेती की तुलना में बाद की पैदावार में 10-25% की वृद्धि होती है। मक्का के साथ लोबिया या ज्वार के साथ मूंगफली की अंतर-फसल, फसल छत्र संरचना, जड़ की गहराई और फेनोलॉजी में अंतर का लाभ उठाकर 1.2 से अधिक भूमि समतुल्य अनुपात (एलईआर) प्राप्त करती है, जिसका अर्थ है कि मिश्रित प्रणाली प्रति इकाई क्षेत्र में किसी भी फसल की तुलना में अधिक संयुक्त बायोमास उत्पन्न करती है।

फसल अवशेषों को न जलाएं और उन्हें बायोचार में परिवर्तित करें: बायोचार की वृहद छिद्रयुक्त संरचना पौधों के लिए उपलब्ध जल धारण क्षमता को 10-20% तक बढ़ाती है और सूक्ष्मजीव समुदायों और कवक नेटवर्क को स्थिर संरक्षित आवास प्रदान करती है। 5-20 टन प्रति हेक्टेयर की दर से खाद या जैव उर्वरक के साथ मिलाकर प्रयोग करने पर, यह मिश्रण छिद्रयुक्त बायोचार मैट्रिक्स का उपयोग सूक्ष्मजीवों के आश्रय के रूप में करता है। इससे मृदा जीव विज्ञान और फसल उपज दोनों पर ऐसे सहक्रियात्मक प्रभाव

उत्पन्न होते हैं जो किसी भी संशोधन के अकेले योगदान से कहीं अधिक होते हैं।

फसल विविधीकरण: पोषक तत्वों का दोहन मृदा प्रबंधन को जुताई की परत से आगे बढ़ाता है। गहरी जड़ों वाली फसलें नाइट्रेट, पोटेशियम और सूक्ष्म पोषक तत्वों तक उन गहराइयों तक पहुँचती हैं जहाँ उथली जड़ों वाले अनाज नहीं पहुँच पाते, और उन्हें पत्तों और जड़ों के सड़ने के माध्यम से जैविक चक्र में वापस खींच लेती हैं। सरसों और सूरजमुखी जैसी फँसाने वाली फसलें अलग तरह से काम करती हैं, कटाई के बाद परती भूमि के दौरान अतिरिक्त नाइट्रेट को भूजल तक पहुँचने से पहले ही सोख लेती हैं। फिर उनका अपघटित बायोमास बिना किसी अतिरिक्त लागत के सतह पर जैविक पदार्थ जोड़ता है।

सतत प्रथाओं का अभिसरण: ये सभी प्रथाएँ पृथक-पृथक रूप में ऊर्जा-मिट्टी-जल सहक्रिया के व्यापक ढांचे में अभिसरित होती हैं, जो इस सिद्धांत पर आधारित है कि मिट्टी में कार्बन की स्थिति, जल उपयोग दक्षता और खेत में ऊर्जा की खपत परस्पर निर्भर घटक हैं जिन्हें अलग-अलग प्रबंधित करने के बजाय एक प्रणाली के रूप में समाहित किया जाना चाहिए। संरक्षण जुताई और शून्य-जुताई डीजल ईंधन की खपत को 30-40 लीटर प्रति हेक्टेयर तक कम करती है, जबकि मृदा संरचना को बनाए रखती है जो अंतर्प्रवाह को सुगम बनाती है, अपवाह को कम करती है, मिट्टी में जैविक कार्बन की मात्रा में प्रत्येक प्रतिशत वृद्धि से मिट्टी की पौधों के लिए उपलब्ध जल धारण क्षमता में लगभग 1.5% की वृद्धि होती है, जिससे सिंचाई की आवृत्ति और पंपिंग लागत कम करने में मदद मिलती है। साथ ही, फर्टिगेशन के माध्यम से की जाने वाली सटीक सिंचाई से समान रोपित क्षेत्र के लिए बाढ़ प्रणाली की तुलना में पंप पर ऊर्जा खपत में 25-45% की कमी आती है।

निष्कर्ष

जांचे गए प्रत्येक आयाम जैसे की मृदा स्वास्थ्य, पोषक तत्व चक्रण, जैविक इनपुट, जल दक्षता और जलवायु लचीलापन - में प्रमाण स्पष्ट और सुसंगत हैं। अंधाधुंध दोहन पर आधारित कृषि प्रणालियों का भविष्य सीमित है। सतत कृषि उत्पादकता को ध्यान में देते हुए, उत्पादकता की कीमत और उसकी निरंतरता के बारे में अधिक गंभीरतापूर्वक पुनर्विचार करना चाहिए। मृदा जैविक कार्बन इस समग्र तंत्र के केंद्र में स्थित है, जो जल धारण, पोषक तत्वों की उपलब्धता, सूक्ष्मजीवों के कार्य और ऊर्जा उपयोग को एक जटिल ताने बाने से इस प्रकार जोड़ता है कि एक बार समाप्त हो जाने पर कोई भी कृत्रिम इनपुट इसकी भरपाई नहीं कर सकता। यहां प्रलेखित पद्धतियां प्रयोगात्मक नहीं हैं। ये क्षेत्र-परीक्षित हैं, लागत के लिहाज़ से तेजी से प्रतिस्पर्धी हैं और उन किसानों के लिए सुलभ हैं जिनके पास इन्हें लागू करने का ज्ञान है। यहीं वह अवस्था है जहाँ संस्थागत समर्थन निर्णायक हो जाता है, और 'मेरा गाँव- मेरा गौरव' जैसे कार्यक्रम अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कैटेट के अंगीकृत पानीपत के माछरौली गांव में भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान वैज्ञानिकों की टीम द्वारा जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किया, जिसमें मृदा स्वास्थ्य, जैव उर्वरक, हरित खाद और लागत में कमी जैसे विषयों पर कृषकों की को जानकारी दी गई। यह अनुसंधान को खेत स्तर पर पहुंचाने का एक सटीक उदाहरण है। इस दृष्टिकोण से पोषक तत्वों के उपयोग की दक्षता में सुधार करके उर्वरक लागत में कटौती की जा सकती है, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम किया जा सकता है और उन सभी चक्रों को तोड़ा जा सकता है जो उच्च व्यय और कम प्रतिफल को बढ़ावा देता है। अनुसंधान केंद्र और खेत के बीच की दूरी को एक-एक गांव करके कम करने से ही वास्तविक बदलाव लाया जा सकता है।

संतुलित उर्वरक उपयोग अभियान: टिकाऊ कृषि की ओर एक वैज्ञानिक पहल

रवींद्र पडारिया, प्रतिभा जोशी, सर्वाशिस चक्रवर्ती एवं पुनीता पी
भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली

भारतीय कृषि वर्तमान समय में ऐसी स्थिति में है, जहाँ उत्पादन वृद्धि के पारंपरिक दृष्टिकोण के साथ-साथ मृदा स्वास्थ्य, संसाधन संरक्षण एवं पर्यावरणीय स्थिरता को समान महत्व देना आवश्यक हो गया है। इस संदर्भ में संतुलित उर्वरक उपयोग अभियान पोषक तत्व प्रबंधन को अधिक वैज्ञानिक, तर्कसंगत और टिकाऊ बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण पहल के रूप में उभरकर सामने आया है। इसका मूल आधार यह है कि कृषि उत्पादन को केवल उर्वरकों की मात्रा बढ़ाकर नहीं, बल्कि उनके संतुलित, आवश्यकता-आधारित तथा मृदा-विशिष्ट उपयोग द्वारा ही दीर्घकालिक रूप से स्थिर और लाभकारी बनाया जा सकता है। हरित क्रांति के पश्चात भारत में रासायनिक उर्वरकों, विशेषकर नाइट्रोजन, के उपयोग में तीव्र वृद्धि हुई, जिससे प्रारंभिक वर्षों में उत्पादन में उल्लेखनीय सुधार हुआ। किंतु समय के साथ यह स्पष्ट हो गया कि एकपक्षीय उर्वरीकरण ने मृदा के पोषक तत्व संतुलन को प्रभावित किया है। इसके परिणामस्वरूप मृदा की उर्वरता में गिरावट, सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी, उत्पादन में अस्थिरता तथा पर्यावरणीय समस्याएँ उभरकर सामने आई हैं। इसी पृष्ठभूमि में संतुलित उर्वरक उपयोग की अवधारणा का विकास हुआ, जो कृषि को एक समग्र प्रणाली के रूप में देखते हुए मृदा, फसल एवं संसाधनों के बीच संतुलन स्थापित करने पर बल देती है। यह दृष्टिकोण उर्वरक उपयोग को मात्र इनपुट के रूप में नहीं, बल्कि एक वैज्ञानिक प्रबंधन प्रक्रिया के रूप में स्थापित करता है, जिसमें पोषक तत्वों की सही मात्रा, सही समय, सही स्थान और सही विधि का विशेष महत्व है।

भारत जैसे देश में, जहाँ उर्वरकों की खपत अत्यधिक है और नाइट्रोजन आधारित उर्वरकों पर असंतुलित निर्भरता स्पष्ट रूप से देखी जाती है, यह अभियान पोषक तत्व असंतुलन को सुधारने की दिशा में एक संरचनात्मक पहल का रूप लेता है। भारतीय कृषि में उर्वरक उपयोग का असंतुलन मुख्यतः नाइट्रोजन की अधिकता तथा फॉस्फोरस, पोटाश एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के रूप में प्रकट होता है। कई क्षेत्रों में N:P:K अनुपात 7:3:1 या उससे अधिक पाया गया है, जबकि वैज्ञानिक दृष्टि से 4:2:1 को संतुलित माना जाता है। इस असंतुलन का प्रत्यक्ष प्रभाव मृदा स्वास्थ्य पर पड़ता है, जहाँ जैविक कार्बन का स्तर अधिकांश क्षेत्रों में 0.3–0.5% तक सीमित है, जो मृदा की उत्पादकता के लिए अपर्याप्त है। सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी भी एक गंभीर समस्या के रूप में उभर रही है; विभिन्न अध्ययनों के अनुसार भारत की लगभग 45–50% कृषि भूमि जिंक की कमी, तथा उल्लेखनीय क्षेत्र आयरन और बोरॉन की कमी से प्रभावित है। यह स्थिति फसल गुणवत्ता, पोषण मूल्य तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता को प्रभावित करती है। इसके अतिरिक्त, नाइट्रोजन उपयोग दक्षता (NUE) भारत में केवल 30–40% के आसपास है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि उर्वरक का एक बड़ा भाग लीचिंग या गैसीय उत्सर्जन के रूप में नष्ट हो जाता है, जो आर्थिक एवं पर्यावरणीय दोनों दृष्टियों से हानिकारक है। अतः संतुलित उर्वरक उपयोग अभियान को केवल एक तकनीकी हस्तक्षेप के रूप में नहीं, बल्कि एक व्यापक कृषि रणनीति के रूप में समझना आवश्यक है, जो उत्पादन वृद्धि, मृदा स्वास्थ्य संरक्षण, पर्यावरणीय संतुलन तथा आर्थिक दक्षता के बीच समन्वय स्थापित करता है। यह पहल कृषि को अधिक टिकाऊ, संसाधन-कुशल तथा भविष्य उन्मुख बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण आधार प्रदान करती है।

अभियान का मूल उद्देश्य

संतुलित उर्वरक उपयोग अभियान का केंद्रीय उद्देश्य कृषि प्रणाली में पोषक तत्वों के उपयोग को इस प्रकार व्यवस्थित करना है कि प्रत्येक पोषक तत्व फसल की वास्तविक मांग के अनुरूप, वैज्ञानिक रूप से निर्धारित मात्रा, समय और स्थान पर उपलब्ध कराया जा सके। यह दृष्टिकोण उर्वरक उपयोग को मात्र "इनपुट आपूर्ति" के रूप में नहीं, बल्कि एक सुनियोजित पोषण प्रबंधन प्रक्रिया के रूप में स्थापित करता है, जिसमें पोषक तत्वों की उपलब्धता, मृदा की स्थिति, फसल की अवस्था तथा पर्यावरणीय कारकों के बीच समन्वय सुनिश्चित किया जाता है। इस प्रकार, उत्पादन वृद्धि को केवल मात्रा पर नहीं, बल्कि पोषण की गुणवत्ता और संतुलन पर आधारित किया जाता है।

इस अभियान का एक प्रमुख लक्ष्य उर्वरक उपयोग की दक्षता को बढ़ाना है, ताकि कम संसाधनों के उपयोग से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सके। पोषक तत्वों के अनुकूलन के माध्यम से न केवल इनपुट लागत में कमी लाई जा सकती है, बल्कि मृदा में पोषक तत्वों

के संचयन, हानि तथा असंतुलन जैसी समस्याओं को भी नियंत्रित किया जा सकता है। यह विशेष रूप से उन परिस्थितियों में महत्वपूर्ण हो जाता है, जहाँ उर्वरकों का उपयोग उच्च स्तर पर होने के बावजूद अपेक्षित उत्पादन लाभ प्राप्त नहीं हो पाता। भारतीय संदर्भ में यह उद्देश्य और भी अधिक प्रासंगिक हो जाता है, क्योंकि उर्वरक उपयोग का स्वरूप लंबे समय से असंतुलित रहा है। नाइट्रोजन आधारित उर्वरकों, विशेषकर यूरिया, की तुलनात्मक रूप से अधिक खपत के कारण अन्य आवश्यक पोषक तत्वों का उपयोग अपेक्षाकृत कम रहा है, जिससे मृदा में पोषण असंतुलन उत्पन्न हुआ है। यह अभियान इस असंतुलन को दूर करने के साथ-साथ उर्वरक उपयोग को अधिक संतुलित, विवेकपूर्ण एवं दीर्घकालिक दृष्टि से उपयुक्त बनाने का प्रयास करता है। इसके अतिरिक्त, इस पहल का उद्देश्य कृषि को पर्यावरणीय दृष्टि से अधिक सुरक्षित बनाना भी है। उर्वरकों के वैज्ञानिक उपयोग से पोषक तत्वों की अनावश्यक हानि, जल स्रोतों का प्रदूषण तथा ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम किया जा सकता है। इस प्रकार, संतुलित उर्वरक उपयोग अभियान उत्पादन, संसाधन संरक्षण और पर्यावरणीय स्थिरता के बीच संतुलन स्थापित करने का एक महत्वपूर्ण माध्यम बनता है।

क्यों आवश्यक है: पारंपरिक प्रवृत्तियों से वैज्ञानिक दृष्टिकोण

पारंपरिक कृषि पद्धतियों में उर्वरक उपयोग प्रायः इस धारणा पर आधारित रहा है कि अधिक मात्रा में उर्वरक डालने से उत्पादन स्वतः बढ़ेगा। यह "अधिक उपयोग, अधिक उत्पादन" की सोच अल्पकालिक रूप से लाभकारी प्रतीत हो सकती है, क्योंकि प्रारंभिक वर्षों में इससे फसल वृद्धि में तेजी आती है। किंतु दीर्घकालिक अनुसंधानों और खेत-स्तरीय अनुभवों से यह स्पष्ट हो चुका है कि यह दृष्टिकोण टिकाऊ नहीं है, बल्कि समय के साथ मृदा की उत्पादक क्षमता को कमजोर करता है।

विशेष रूप से नाइट्रोजन पर अत्यधिक निर्भरता ने पोषक तत्व संतुलन को गंभीर रूप से प्रभावित किया है। जब फॉस्फोरस, पोटाश तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपेक्षा की जाती है, तो मृदा में पोषण असंतुलन उत्पन्न होता है, जिससे पौधों को आवश्यक पोषण समुचित रूप से प्राप्त नहीं हो पाता। इसके परिणामस्वरूप मृदा की भौतिक संरचना कमजोर होती है, जल धारण क्षमता घटती है तथा सूक्ष्मजीवों की सक्रियता कम हो जाती है, जो मृदा की दीर्घकालिक उर्वरता के लिए अत्यंत आवश्यक है। इस प्रकार की असंतुलित पोषण व्यवस्था अंततः उत्पादन में सीमांत प्रतिफलता (diminishing returns) की स्थिति उत्पन्न करती है, जहाँ उर्वरक की मात्रा बढ़ाने के बावजूद उत्पादन में अपेक्षित वृद्धि नहीं होती। इससे न केवल किसानों की लागत बढ़ती है, बल्कि संसाधनों की दक्षता भी कम हो जाती है।

इसके अतिरिक्त, पोषक तत्वों का असंतुलन पौधों की वृद्धि को भी प्रभावित करता है, जिससे उनकी संरचना और विकास असमान हो जाता है। उर्वरकों का एक महत्वपूर्ण भाग पौधों द्वारा अवशोषित नहीं हो पाता और अपवाह (runoff) तथा रिसाव (leaching) के माध्यम से जल स्रोतों में पहुँच जाता है। इससे भूजल प्रदूषण, यूट्रोफिकेशन (जलाशयों में पोषक तत्वों की अधिकता) तथा नाइट्रस ऑक्साइड जैसी ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में वृद्धि होती है, जो जलवायु परिवर्तन को भी प्रभावित करती हैं। अतः संतुलित उर्वरक उपयोग की आवश्यकता केवल उत्पादन वृद्धि तक सीमित नहीं है, बल्कि यह मृदा स्वास्थ्य संरक्षण, संसाधनों के कुशल उपयोग तथा पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। यह कृषि को एक अल्पकालिक उत्पादन प्रणाली से आगे बढ़ाकर दीर्घकालिक रूप से टिकाऊ और जिम्मेदार प्रणाली में परिवर्तित करने का आधार प्रदान करता है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य: उर्वरक उपयोग की प्रवृत्ति और संरचनात्मक चुनौतियाँ

भारत विश्व के प्रमुख उर्वरक उपभोक्ता देशों में से एक है, जहाँ उर्वरकों की मांग लगातार बढ़ रही है। उपलब्ध आँकड़ों के अनुसार वर्ष 2023-24 में देश की कुल वार्षिक उर्वरक खपत लगभग 601 लाख मीट्रिक टन (LMT) रही। यदि दीर्घकालिक प्रवृत्ति पर दृष्टि डालें, तो वर्ष 2014–15 में कुल उर्वरक उत्पादन 385.39 LMT था, जो बढ़कर वर्ष 2023–24 में लगभग 503.35 LMT हो गया है। यह वृद्धि उत्पादन क्षमता में सुधार को दर्शाती है।

विशेष रूप से यूरिया के संदर्भ में, घरेलू उत्पादन वर्ष 2023-24 में 314 LMT से अधिक रहा, जो नाइट्रोजन आधारित उर्वरकों पर अत्यधिक निर्भरता को इंगित करता है। यह स्थिति पोषक तत्व असंतुलन के प्रमुख कारणों में से एक है। नीतिगत स्तर पर भी उर्वरक क्षेत्र में बड़े निवेश किए जा रहे हैं। वर्ष 2024-25 के लिए उर्वरक विभाग का कुल बजट लगभग ₹1,91,836 करोड़ निर्धारित किया गया है, जिसमें से ₹54,310 करोड़ पोषक तत्व आधारित सब्सिडी (NBS) के अंतर्गत आवंटित किए गए हैं। इसके अतिरिक्त, यूरिया की कीमत को नियंत्रित रखने के लिए 45 किलोग्राम के बैग का खुदरा मूल्य लगभग ₹242 निर्धारित किया गया है, जो किसानों को सस्ती उपलब्धता सुनिश्चित करता है।

संकेतक	डेटा	स्रोत
भारत की कुल वार्षिक उर्वरक खपत, 2023-24	लगभग 601 एलएमटी	pib.gov
घरेलू उत्पादन, 2023-24	503 एलएमटी	pib.gov
कुल उर्वरक उत्पादन, 2014-15	385.39 एलएमटी	icar.org
कुल उर्वरक उत्पादन, 2023-24	503.35 एलएमटी	icar.org
घरेलू यूरिया उत्पादन, 2023-24	314 एलएमटी से अधिक	icar.org
उर्वरक विभाग का अंतिम बजट, 2024-25	₹1,91,836.29 करोड़	pib.gov
NBS आवंटन, 2024-25	₹54,310 करोड़	pib.gov
यूरिया खुदरा मूल्य	45 किग्रा बैग के लिए ₹242	pib.gov

उपरोक्त आँकड़े यह स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि भारत में उर्वरक उपयोग का पैमाना अत्यंत बड़ा है। सब्सिडी संरचना, विशेषकर यूरिया पर अधिक सब्सिडी, किसानों को नाइट्रोजन उर्वरकों के अधिक उपयोग के लिए प्रोत्साहित करती है, जबकि फॉस्फेटिक और पोटाशिक उर्वरकों का उपयोग अपेक्षाकृत कम रहता है। इससे पोषक तत्वों का अनुपात बिगड़ता है और संतुलित उर्वरक उपयोग की आवश्यकता और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

वैज्ञानिक आधार एवं कार्यप्रणाली: समन्वित, स्थल-विशिष्ट पोषण प्रबंधन और विस्तार तंत्र

संतुलित उर्वरक उपयोग अभियान का वैज्ञानिक आधार समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन तथा स्थल-विशिष्ट पोषक तत्व प्रबंधन की अवधारणाओं पर आधारित है, जिनके माध्यम से पोषण प्रबंधन को अधिक सटीक, संतुलित और परिणामोन्मुख बनाया जाता है। समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन के अंतर्गत रासायनिक उर्वरकों के साथ-साथ जैविक स्रोतों जैसे गोबर खाद, कम्पोस्ट, वर्मी-कम्पोस्ट, हरी खाद तथा जैव उर्वरकों का संयोजन अपनाया जाता है। इससे मृदा की भौतिक संरचना में सुधार होता है, जैविक सक्रियता बढ़ती है तथा पोषक तत्वों की उपलब्धता अधिक संतुलित रूप में बनी रहती है। यह दृष्टिकोण मृदा को एक जीवंत तंत्र के रूप में स्वीकार करते हुए उसकी दीर्घकालिक उर्वरता को बनाए रखने पर बल देता है। इसके साथ ही, स्थल-विशिष्ट पोषक तत्व प्रबंधन के अंतर्गत प्रत्येक खेत की मृदा की वास्तविक स्थिति, फसल की आवश्यकता तथा स्थानीय जलवायु परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उर्वरक सिफारिशें तैयार की जाती हैं। इस पद्धति से उर्वरक उपयोग अधिक लक्षित और प्रभावी बनता है, जिसके परिणामस्वरूप पोषक तत्व उपयोग दक्षता में उल्लेखनीय सुधार संभव होता है। इसी क्रम में "चार आर सिद्धांत"-सही स्रोत, सही मात्रा, सही समय और सही विधि, पोषण प्रबंधन को वैज्ञानिक आधार प्रदान करते हैं और पोषक तत्वों की अनावश्यक हानि को कम करने में सहायक सिद्ध होते हैं।

इन वैज्ञानिक सिद्धांतों को व्यवहार में रूपांतरित करने के लिए अभियान की कार्यप्रणाली एक समन्वित प्रसार तंत्र के रूप में विकसित की गई है, जिसमें अनुसंधान, शिक्षा और प्रसार के विभिन्न संस्थानों का एकीकृत योगदान सुनिश्चित होता है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थान, कृषि विज्ञान केंद्र, राज्य कृषि विश्वविद्यालय तथा राज्य कृषि विभाग के सहयोग से गांव स्तर पर किसानों तक वैज्ञानिक जानकारी का प्रभावी प्रसार सुनिश्चित होगा । इस प्रक्रिया के अंतर्गत किसानों को जागरूकता अभियानों, प्रशिक्षण कार्यक्रमों, फील्ड प्रदर्शन, मृदा परीक्षण आधारित सलाह तथा किसान-वैज्ञानिक संवाद के माध्यम से जागरूक किया जा रहा है, जिससे वे अपनी स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप उर्वरक प्रबंधन को समझ सकें। भा कृ अनु प – भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में "मेरा गांव मेरा गौरव" कार्यक्रम के अंतर्गत वैज्ञानिकों द्वारा गांवों को गोद लेकर प्रत्यक्ष तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान किया जा रहा है, जिससे ज्ञान का स्थानीय स्तर पर अनुकूलन और व्यवहार में परिवर्तन संभव हो सके । इसके अतिरिक्त, आधुनिक संचार माध्यमों और डिजिटल साधनों जैसे मोबाइल आधारित सलाह, मृदा स्वास्थ्य कार्ड तथा अन्य सूचना तंत्र के माध्यम से किसानों को समयानुकूल एवं स्थान-विशिष्ट जानकारी उपलब्ध कराई जाएगी । इससे कृषि में निर्णय प्रक्रिया अधिक वैज्ञानिक, सटीक और डेटा-आधारित बनेगी, तथा संतुलित उर्वरक उपयोग की अवधारणा को व्यावहारिक स्तर पर प्रभावी रूप से लागू करने में सहायता मिलेगी।

कृषि, अर्थव्यवस्था एवं पर्यावरण पर प्रभाव

1. कृषि पर प्रभाव: उत्पादकता, गुणवत्ता एवं मृदा स्थिरता

संतुलित उर्वरक उपयोग का कृषि प्रणाली पर व्यापक और दीर्घकालिक प्रभाव पड़ता है, जो केवल उत्पादन वृद्धि तक सीमित नहीं है, बल्कि मृदा की उर्वरता, फसल की गुणवत्ता तथा कृषि प्रणाली की स्थिरता को भी प्रभावित करता है। जब फसलों को नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों का संतुलित अनुपात प्राप्त होता है, तो उनकी वृद्धि, पुष्पन एवं दाना भरने की प्रक्रिया अधिक संतुलित और प्रभावी होती है। विभिन्न अध्ययनों के अनुसार, संतुलित पोषण प्रबंधन अपनाने से औसतन 15–20 प्रतिशत तक उत्पादन वृद्धि दर्ज की गई है, विशेष रूप से धान, गेहूँ एवं सब्जियों जैसी प्रमुख फसलों में।

मृदा परीक्षण आधारित उर्वरक सिफारिशों के माध्यम से पोषक तत्वों की अनावश्यक हानि को रोका जा सकता है, जिससे न केवल फसल की गुणवत्ता में सुधार होता है, बल्कि पोषण मूल्य भी बेहतर होता है। दीर्घकालिक दृष्टि से यह मृदा की जैविक सक्रियता एवं सूक्ष्मजीव विविधता को बनाए रखने में सहायक होता है, जिससे एक ही खेत में फसल चक्र को अधिक प्रभावी ढंग से अपनाया जा सकता है। इस प्रकार संतुलित उर्वरक उपयोग कृषि को अधिक वैज्ञानिक, स्थिर एवं टिकाऊ बनाता है।

2. आर्थिक प्रभाव: लागत दक्षता एवं आय वृद्धि

संतुलित उर्वरक उपयोग का आर्थिक प्रभाव भी अत्यंत महत्वपूर्ण है, विशेषकर छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए। वैज्ञानिक पोषण प्रबंधन के माध्यम से उर्वरकों का उपयोग अधिक दक्षता के साथ किया जाता है, जिससे अनावश्यक खपत कम होती है और लागत में कमी आती है। विभिन्न आकलनों के अनुसार, संतुलित उर्वरक उपयोग से उर्वरक लागत में 20–30 प्रतिशत तक कमी संभव है।

इसके परिणामस्वरूप किसानों की शुद्ध आय में भी वृद्धि होती है, जो औसतन 10–25 प्रतिशत तक दर्ज की गई है। यह वृद्धि केवल लागत में कमी के कारण नहीं, बल्कि बेहतर उत्पादन और गुणवत्ता के कारण भी होती है। इसके अतिरिक्त, उर्वरक सब्सिडी का उपयोग अधिक लक्षित और कुशल बनता है, जिससे सरकारी व्यय में भी सुधार संभव होता है। इस प्रकार संतुलित उर्वरक उपयोग न केवल किसान स्तर पर, बल्कि राष्ट्रीय आर्थिक स्तर पर भी सकारात्मक प्रभाव डालता है।

3. पर्यावरणीय प्रभाव: संसाधन संरक्षण एवं जलवायु संतुलन

संतुलित उर्वरक उपयोग पर्यावरणीय दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह पोषक तत्वों की हानि को नियंत्रित करता है और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में सहायक होता है। नाइट्रोजन के अत्यधिक उपयोग से होने वाली नाइट्रेट लीचिंग को संतुलित उपयोग के माध्यम से 40–50 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है, जिससे भूजल प्रदूषण की समस्या नियंत्रित होती है। इसके अतिरिक्त, ग्रीनहाउस गैसों विशेषकर नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O) के उत्सर्जन में लगभग 30 प्रतिशत तक कमी संभव है, जो जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने में सहायक है। संतुलित उर्वरक उपयोग मृदा कार्बन संतुलन को भी बेहतर बनाता है और जैविक विविधता के संरक्षण में योगदान देता है। इस प्रकार यह कृषि को अधिक पर्यावरण-अनुकूल एवं जलवायु-स्मार्ट बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

नीतिगत समर्थन एवं प्रमुख योजनाएँ

1. मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना

मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना वर्ष 2015 में प्रारंभ की गई एक प्रमुख पहल है, जिसका उद्देश्य किसानों को उनकी मृदा की पोषण स्थिति की जानकारी प्रदान करना तथा वैज्ञानिक उर्वरक सिफारिशें उपलब्ध कराना है। इस योजना के अंतर्गत अब तक 25 करोड़ से अधिक मृदा स्वास्थ्य कार्ड वितरित किए जा चुके हैं। प्रत्येक किसान को तीन वर्ष में एक बार मृदा परीक्षण के आधार पर N, P, K, सल्फर तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों की सिफारिश प्रदान की जाती है। देश में लगभग 1,400 से अधिक मृदा परीक्षण प्रयोगशालाएँ तथा मोबाइल परीक्षण इकाइयाँ स्थापित की गई हैं, जिनके माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों तक सेवाओं की पहुँच सुनिश्चित की गई है। यह योजना संतुलित उर्वरक उपयोग के वैज्ञानिक आधार को मजबूत करती है।

2. प्रधानमंत्री प्रणाम योजना

प्रधानमंत्री प्रणाम योजना वर्ष 2023 में प्रारंभ की गई, जिसका उद्देश्य उर्वरकों के उपयोग में कमी लाना तथा संतुलित उपयोग को बढ़ावा देना है। इस योजना के अंतर्गत उर्वरक खपत में कमी लाने वाले राज्यों को 50 प्रतिशत तक प्रोत्साहन राशि प्रदान की जाती है। यह योजना नैनो यूरिया, नीम-लेपित यूरिया तथा जैविक खाद के उपयोग को प्रोत्साहित करती है। वर्ष 2024–25 के लिए इसके

अंतर्गत लगभग ₹100 करोड़ का आवंटन किया गया है। यह पहल व्यवहार परिवर्तन आधारित नीति हस्तक्षेप का उदाहरण है।

3. नीम-लेपित यूरिया नीति

वर्ष 2015 में लागू इस नीति के अंतर्गत 100 प्रतिशत यूरिया को नीम से लेपित करना अनिवार्य किया गया। इससे नाइट्रोजन की हानि कम हुई तथा उर्वरक उपयोग दक्षता में 20–30 प्रतिशत तक वृद्धि दर्ज की गई। नीम कोटिंग के कारण यूरिया का धीमी गति से उत्सर्जन होता है, जिससे पौधों को पोषक तत्व लंबे समय तक उपलब्ध रहते हैं। साथ ही, इससे काला बाजार और औद्योगिक दुरुपयोग पर भी नियंत्रण स्थापित हुआ है।

4. पोषक तत्व आधारित सब्सिडी प्रणाली

पोषक तत्व आधारित सब्सिडी प्रणाली के अंतर्गत नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश और सल्फर के अनुपात में सब्सिडी प्रदान की जाती है, जिससे संतुलित उर्वरक उपयोग को प्रोत्साहन मिलता है। वर्ष 2024–25 के लिए इसके अंतर्गत लगभग ₹54,310 करोड़ का प्रावधान किया गया है। यह प्रणाली किसानों को विभिन्न उर्वरकों के संतुलित उपयोग के लिए प्रोत्साहित करती है और यूरिया पर अत्यधिक निर्भरता को कम करने में सहायक है।

5. एक राष्ट्र एक उर्वरक योजना

इस योजना के अंतर्गत "भारत यूरिया" एवं "भारत डीएपी" जैसे एकीकृत ब्रांड नामों के माध्यम से उर्वरकों का वितरण किया जा रहा है। इससे गुणवत्ता में एकरूपता, वितरण में पारदर्शिता तथा किसानों को स्पष्ट जानकारी सुनिश्चित होती है। 2022 से सक्रिय, यूरिया/DAP/MOP/NPK पर लागू। फ्रेट सब्सिडी बचत, क्रॉस-स्टेट मूवमेंट कम। सभी सब्सिडी वाले 26+ उर्वरकों पर "भारत" ब्रांड अनिवार्य है ।

निष्कर्ष

संतुलित उर्वरक उपयोग अभियान भारतीय कृषि में एक ऐसे परिवर्तनकारी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता है, जो उत्पादन वृद्धि को मृदा स्वास्थ्य, संसाधन संरक्षण और पर्यावरणीय स्थिरता के साथ जोड़ता है। यह स्पष्ट करता है कि कृषि प्रणाली की दीर्घकालिक सफलता केवल अधिक इनपुट उपयोग पर निर्भर नहीं करती, बल्कि उनके वैज्ञानिक, संतुलित और संदर्भ-विशिष्ट प्रबंधन पर आधारित होती है।

इस अभियान का महत्व इस बात में निहित है कि यह मृदा को एक जीवंत संसाधन मानते हुए उसकी गुणवत्ता, जैविक सक्रियता और पोषक तत्व संतुलन को बनाए रखने पर बल देता है। इसके माध्यम से कृषि उत्पादन को अधिक स्थिर, गुणवत्तापूर्ण और पोषण-संवेदनशील बनाया जा सकता है। साथ ही, यह पोषक तत्वों के कुशल उपयोग को बढ़ावा देकर अनावश्यक हानि, संसाधनों के क्षय तथा पर्यावरणीय दुष्प्रभावों को नियंत्रित करने में सहायक है।

वर्तमान परिदृश्य में, जहाँ कृषि को बढ़ती जनसंख्या, सीमित संसाधनों और जलवायु परिवर्तन जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, संतुलित उर्वरक उपयोग एक व्यवहारिक और वैज्ञानिक समाधान के रूप में उभरता है। यह न केवल किसानों की आर्थिक स्थिरता को सुदृढ़ करता है, बल्कि कृषि को अधिक लचीला, उत्तरदायी और भविष्य के लिए तैयार बनाता है।

अतः, यह कहा जा सकता है कि संतुलित उर्वरक उपयोग अभियान कृषि के सतत विकास की दिशा में एक ठोस आधार प्रस्तुत करता है, जो उत्पादन, पर्यावरण और आर्थिक संतुलन के बीच सामंजस्य स्थापित करते हुए एक जिम्मेदार कृषि प्रणाली के निर्माण में सहायक सिद्ध होता है।

मिट्टी के स्वास्थ्य का आकलन करने के लिए एक किसान - अनुकूल विधि

देबाशीष मंडल
मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन संभाग

किसानों के साथ-साथ विस्तार कार्यकर्ताओं के सामने आनेवाली चुनौतियों में से एक यह है कि यह जानना कि कब एक कृषि-परितंत्र (agroecosystem) स्वस्थ है। विशेष कृषि-परितंत्रों की स्थितिका आकलन करने के लिए स्थिरता संकेतकों (sustainability indicators) का एक समूह तैयार किया गया है। इस ब्रोशर में हम मृदा गुणवत्ता का शीघ्र आकलन करने के लिए एक व्यावहारिक कार्यप्रणाली का वर्णन करते हैं। यद्यपि संकेतक निम्न पहाड़ीया घाटी क्षेत्रों के लिए विशिष्ट हैं, कुछ संशोधनों के साथ, यह कार्यप्रणाली विभिन्न क्षेत्रों के व्यापक कृषि-परितंत्रों पर लागू की जा सकती है। यहाँ वर्णित संकेतकों का चयन इसलिए किया गया क्योंकि:

- वे किसानों द्वारा उपयोग में आसान हैं।
- वे अपेक्षाकृत सटीक हैं और समझने में आसान हैं।
- वे नए प्रबंधन निर्णय लेने के लिए व्यावहारिक हैं।
- वे पर्यावरणीय परिवर्तनों और मृदा तथा फसल पर प्रबंधन प्रथाओं के प्रभावों को दर्शाने के लिए पर्याप्त संवेदनशील हैं।
- अधिकांश में मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणों को एकीकृत करने की क्षमता होती है।

हमने मिट्टी के गुणात्मक संकेतकों का चयन किया, जो किसानों और क्षेत्र की जैव-भौतिक परिस्थितियों के लिए प्रासंगिक हैं। इन पहले से अच्छी तरह परिभाषित संकेतकों के साथ, स्थिरता को मापने की प्रक्रिया समान रहती है, अध्ययन किए गए क्षेत्र के विभिन्न खेतों में पाई जानेवाली परिस्थितियों की विविधता से स्वतंत्र। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि एक बार संकेतकों को लागू करने के बाद, प्रत्येक किसान अपने खेत की स्थितियों को देख सकता है, यह ध्यान देते हुए कि मिट्टी या पौधों के कौन से गुण पहले से स्थापित सीमा की तुलना में अच्छे या कमजोर प्रदर्शन कर रहे हैं। जब इस पद्धति को विभिन्न खेतों में एक साथ लागू किया जाता है, तब यह देखना संभव होता है कि कौन से खेत स्थिरता के कम या अधिक मान प्रदर्शित करते हैं।

तालिका 1. मृदा स्वास्थ्य संकेतक उनके संबंधित गुणधर्मों और मानों के साथ (प्रत्येक संकेतक को 1-10 के बीच मान दिए जा सकते हैं)

1. मृदा संरचना

स्थापित मान	विशेषताएँ	
1	ढीली, चूर्ण जैसी मिट्टी जिस में कोई स्पष्ट संघटन नहीं है।	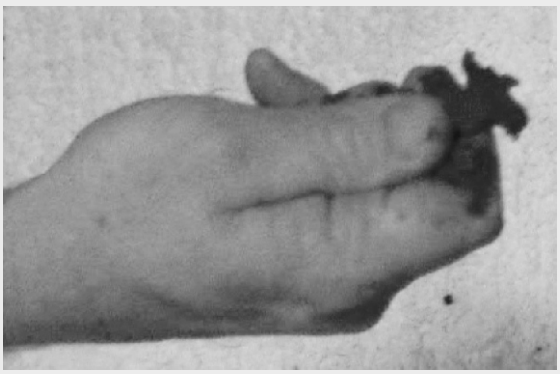
5	कुछ संघटन जो हल्के दबाव से टूट जाते हैं।	
10	अच्छी तरह बने संघटन जिन्हें तोड़ना कठिन है।	

2. मृदा संघनन

स्थापित मान	विशेषताएँ
1	संकुचित मिट्टी, झंडा आसानी से मुड़ता है।
5	पतली संकुचित परत, एक प्रवेश करनेवाले तार के लिए कुछ अवरोध।
10	कोई संकुचन नहीं, झंडा मिट्टी में पूरी तरह प्रवेश कर सकता है।

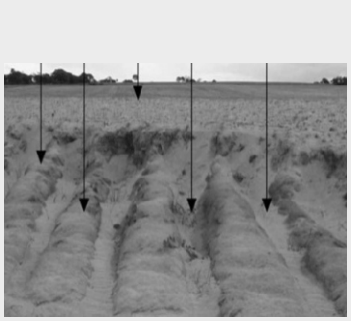

3. मृदा की गहराई

स्थापित मान	विशेषताएँ
1	उजागर उप-मृदा (मृदा गहराई <25 सेमी)
5	मध्यम रूप से उथली मृदा (25-50 सेमी)
10	गहरी मृदा जिस में मृदा की गहराई कम से कम >50 सेमी हो

4. स्थिति अवशेष

स्थापित मान	विशेषताएँ
1	अवशेष का कोई दृश्य संकेत नहीं, मिट्टी का रंग फीका या हल्का दिखाई देता है।
5	सड़ते हुए अवशेष या मल्च सामग्री की उपस्थिति, मिट्टी का रंग भूरा दिखाई देता है।
10	विभिन्न अवस्थाओं में अवशेष का अपघटन, अधिकांश अवशेष अच्छी तरह विघटित, मिट्टी का रंग गहरा काला दिखाई देता है।

5. मृदा का रंग, गंध और जैविक पदार्थ

स्थापित मान	विशेषताएँ
1	पीला, ह्यूमस की कोई उपस्थिति नहीं, सड़ते अवशेषों या सड़े हुए अवशेषों की कोई गंध नहीं।
5	हल्का भूरा, बिना गंध, ह्यूमस की कुछ उपस्थिति या सड़े हुए पदार्थों की हल्की गंध।
10	गहरा भूरा या कालेपन-वाला रूप, ताज़ी गंध और प्रचुर मात्रा में ह्यूमस।

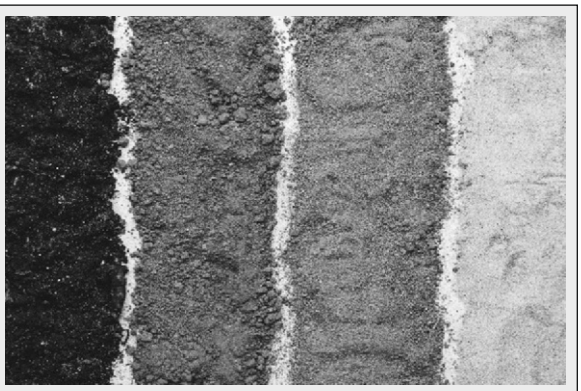

6. मृदा आवरण

स्थापित मान	विशेषताएँ
1	नंगी परती मिट्टी जिस में बहुत कम वनस्पति होती है।
5	कम से कम 6 महीनों तक 50% से कम मिट्टी आवरण अवशेष या जीवित आवरण द्वारा ढका हो।
10	कम से कम 9 महीनों तक 50% से अधिक मिट्टी आवरण अवशेष या जीवित आवरण द्वारा ढका हो।

स्थापित मान	विशेषताएँ
1	केंचुओं या कीटों की उपस्थिति या गतिविधि के कोई संकेत नहीं।
5	कुछ केंचुए और आर्थ्रोपोड्स उपस्थित हैं।
10	अ-कशेरुकी जीवों की प्रचुर उपस्थिति।

यह पद्धति किसानों को स्थिरता को तुलनात्मक या सापेक्ष रूप से मापने की अनुमति देती है, चाहे वह एक ही कृषि-परितंत्र (एग्रो-इकोसिस्टम) के समय के साथ विकास की तुलना करके हो, या विभिन्न प्रबंधन प्रथाओं या संक्रमणीय चरणों के तहत हो या अधिक कृषि-परितंत्रों की तुलना करके हो।

विभिन्न प्रणालियों की तुलना किसानों के एक समूह को अधिक स्वस्थ प्रणालियों, जिन्हें "लाइटहाउस" कहा जाता है, की पहचान करने में सक्षम बनाती है, जहाँ किसान और शोधकर्ता मिलकर उन प्रक्रियाओं और पारिस्थितिक अंतःक्रियाओं की पहचान कर सकते हैं जो इन लाइटहाउसों के अच्छे प्रदर्शन की व्याख्या करती हैं। यह जानकारी बाद में विशिष्ट प्रथाओं में रूपांतरित की जा सकती है जो क्षेत्र में वांछित कृषि-पारिस्थितिक प्रक्रियाओं को अनुकूलित करती हैं, जहाँ सूचकमान सीमास्तर से नीचे होते हैं।

फसलों में संतुलित पोषण के लिए किण्वित जैविक खाद (FOM): समृद्ध मृदा, बढ़ती आय और पर्यावरण संतुलन की ओर एक प्रभावी पहल

संजय सिंह राठौर, राजीव कुमार सिंह. कपिला शेखावत, सुभाष बाबू, प्रवीण उपाध्याय, ऋषि राज, विशाल त्यागी, मोना, मुकेश यादव, शिला नील, अनु नवहाल एवं अंकित राजावत
सस्य विज्ञान संभाग

जैविक खाद, मृदा स्वास्थ्य को सुनिश्चित करने और उत्पादन प्रणालियों में लचीलापन लाने के लिए महत्वपूर्ण है। यह फसलों के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति सुनिश्चित करने के साथ.साथ मिट्टी की भौतिक संरचना को भी बेहतर बनाता है। इसके अतिरिक्तए यह मृदा में उपस्थित सूक्ष्मजीवों की सक्रियता और स्वास्थ्य को बढ़ाकर भूमि की उर्वरता को बनाए रखने में सहायक होता है। मृदा के सूक्ष्म जीव कार्बनिक अपशिष्ट और उपलब्ध बायोमास को पोषक स्रोतों के रूप में पुनर्चक्रित समग्र मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन हेतु महत्वपूर्ण हैं। जैविक खादों में गोबर की खाद, कंपोस्ट, वर्मीकंपोस्ट और पत्ती खाद आदि का उपयोग अनादि काल से किया जा रहा है। यदि इनका वैज्ञानिक और विवेकपूर्ण तरीके से उपयोग किया जाए तो जैविक खाद पौधों के लिए संपूर्ण भोजन है। लेकिन समय के साथ मवेशियों और अन्य पशुओं के खेती में एकीकरण न होने के कारण और किसानों द्वारा जैविक अपशिष्ट खाद बनाने के प्रयासों में कमी के कारण इन मूल्यांकन पोषक तत्वों के स्रोतों का कम उपयोग हुआ है। जिसके परिणाम स्वरुप रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता बढ़ गई है, जो कई समस्याओं का कारण बन रही है, जैसे– उर्वरकों के प्रति फसल की प्रतिक्रिया में गिरावट, निम्न आय और पर्यावरण के नुकसान है। फसल क्षेत्र अथवा परती और बंजर भूमि में जैविक खाद के उपयोग के अनेकोनेक लाभों के बावजूद, इनके उपयोग को लेकर अभी भी कुछ चिंताएं बनी हुई है क्योंकि जैविक अपशिष्ट या बायोमास से जब विघटित खाद तैयार की जाती है, तो यह मीथेन आदि ग्रीनहाउस गैस (GHGs) उत्सर्जित करती है जो जलवायु परिवर्तन जैसे एक गंभीर मुद्दे का कारण बन रहा है। ऐसे में, किण्वित जैविक खाद (FOM) इन सभी मुद्दों को संबोधित करने और समृद्ध जैविक खाद बनाने के लिए संभावित विकल्प हो सकता है। फसल अवशेषों से एफओएम बनाने के दौरान निकलने वाली गैसों को संपीड़ित जैव गैस (CBG) के रूप में जाना जाता है, जिसे सीधे पर्यावरण में न छोड़कर एक मूल्यवान ऊर्जा स्रोत के रूप में एकत्र किया जा रहा है। इस प्रकार यह पर्यावरणीय पदचिन्ह को कम करने में अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

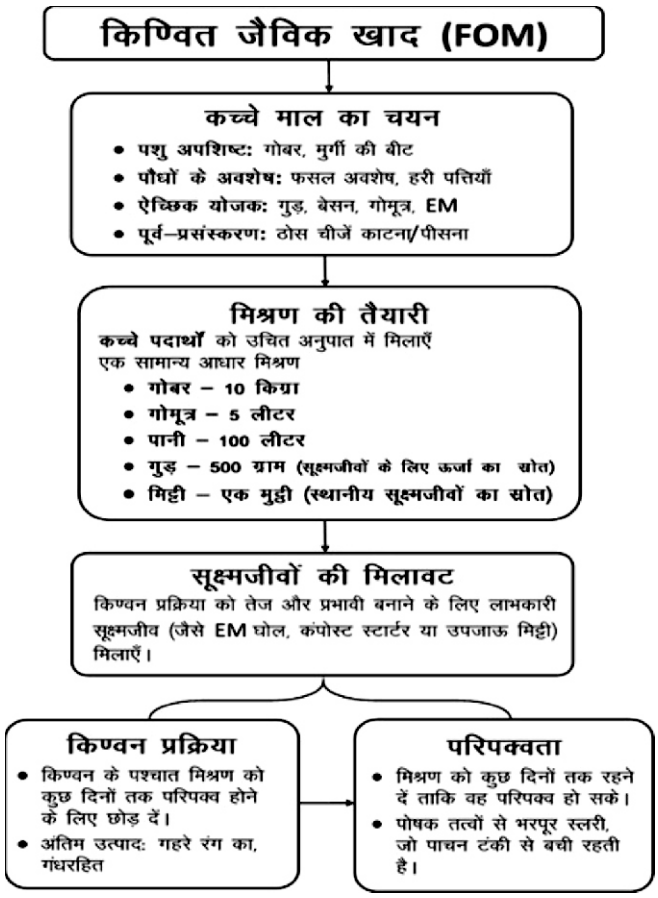

किण्वित जैविक खाद क्या है?

एक ऐसा खाद है, जिसे पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाने और पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने एवं प्रभावशीलता को बेहतर बनाने के लिए किण्विन प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। एफओएम एक जैविक रूप से स्थिर उत्पाद है जो नियंत्रित एरोबिक (वायवीय) या एनारोबिक (अवायवीय) स्थितियों में पशु गोबर, पौधे के अवशेष, या कृषि उप–उत्पादों जैसे कार्बनिक अपशिष्टों के माइक्रोबियल किण्वन से प्राप्त होता है। किण्वन प्रक्रिया के दौरान जटिल कार्बनिक यौगिकों का विघटन होता है, जिससे ये सरल और जैव उपलब्ध पोषक तत्वों में बदल जाते हैं जो मिट्टी की उर्वरता और माइक्रोबियल गतिविधि को बढ़ाने में मदद करते हैं। एफओएम (FOM) के निर्माण से प्राप्त सह–उत्पादों में से एक संपीड़ित बायोगैस है (CBG) है।

सीबीजी, बायोगैस का एक दबावयुक्त रूप है जिसका उपयोग वाहनों और बिजली उत्पादन के लिए नवीकरणीय ईंधन के रूप में किया जाता है।

एफओएम के बारे में मुख्य बातें

- फर्मेंटेड ऑर्गेनिक मैन्योर (FOM) एक सूक्ष्मजीवों द्वारा तैयार की गई जैविक खाद हैए जो मृदा स्वास्थ्य सुधारकर फसल उत्पादकता बढ़ाती है और रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करती है।
- **माइक्रोबियल किण्वनः** इसमें *लैक्टोबैसिलस* प्रजाति, *बेसिलस* प्रजाति और *ऐक्टीनोमाइसेट्स* जैसे लाभकारी सूक्ष्म जीव शामिल होते हैं जो कार्बनिक पदार्थ को विघटित करते हैं।
- **सबस्ट्रेटः** कच्चे माल में जैविक अपशिष्ट जैसे – गाय का गोबर, फसल अवशेष, रसोई का कचरा आदि शामिल है।
- **उपोत्पादः** कार्बनिक अम्ल, एंजाइम, विटामिन और जैव सक्रिय योग जो पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देते हैं।
- **कार्यः** जैव उर्वरक के रूप में कार्य करता है, पोषक चक्रण, मिट्टी की संरचना और पौधों के स्वास्थ्य में सुधार करता है।

एफओएम की संरचना

विभिन्न FOM नमूनों की पोषक सामग्री के आधार पर, हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि पोषक तत्व संरचना उपयोग किए गए कच्चे माल और नियोजित प्रसंस्करण विधियों के आधार पर भिन्न होती है। इसलिए, संवर्धन से पहले थ्ड्ब के प्रारंभिक गुणों का विश्लेषण किया जाना चाहिए।

उत्पादन प्रक्रिया

किण्वित जैविक खाद (FOM) के उत्पादन में नियंत्रित किण्वन स्थितियों के तहत कार्बनिक पदार्थों का सूक्ष्मजीवी अपघटन शामिल है। यहाँ इस प्रक्रिया का चरण–दर–चरण अवलोकन दिया गया हैः

गाय का गोबर – 10 किलो; गाय का मूत्र – 5 लीटर; पानी – 100 लीटर; गुड़ – 500 ग्राम (सूक्ष्मजीवों के लिए ऊर्जा स्रोत); मिट्टी – मुट्ठी भर (देशी सूक्ष्मजीवों के स्रोत के रूप में)।

एफओएम के लाभ

एफओएम के रासायनिक उर्वरकों की तुलना में कई लाभ है, जो निम्नानुसार हैंः

1. मृदा स्वास्थ्य लाभः

- ✓ **मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाता है** – किण्वन पोषक तत्वों को पौधों के लिए आसानी से उपलब्ध रूपों में विघटित कर देता है।
- ✓ **मिट्टी की संरचना में सुधार करता है** – मिट्टी के एकत्रीकरण में मदद करता है, संघनन को कम करता है और वातन को बढ़ाता है।
- ✓ **माइक्रोबियल गतिविधि को बढ़ाता है** – लाभकारी सूक्ष्मजीव मिट्टी की जैव विविधता को बढ़ाते हैं व पोषक तत्व चक्रण को बढ़ावा देते हैं।
- ✓ **पानी के नियमन को बढ़ाता है** – कार्बनिक पदार्थ मिट्टी को नमी बनाए रखने, जल ह्रास को कम करने और सूखे के प्रतिरोध में सुधार करने में मदद करते हैं। रेतीली मिट्टी के अत्यधिक सूखने से रोकता है और चिकनी मिट्टी में जल निकासी में सुधार करता है।
- ✓ **मृदा कटाव को कम करता है** – मिट्टी की बंधन क्षमता में सुधार करता है व पोषक तत्वों की लीचिंग को कम करता है। मिट्टी के कणों को भी मजबूत करता है, जिससे हवा और पानी से कटाव की संभावना कम हो जाती है।
- ✓ **मृदा के पीएच को संतुलित करता है** – अम्लीय या क्षारीय मिट्टी को बेअसर करने में मदद करता है, जिससे बेहतर विकास वातावरण बनता है।
- ✓ **मिट्टी के अम्लीकरण को रोकता है** – रासायनिक उर्वरक, विशेष रूप से नाइट्रोजन आधारित उर्वरक, समय के साथ मिट्टी को अम्लीय बना सकते हैं, जबकि एफओएम पीएच संतुलन बनाए रखने में मदद करता है।
- ✓ **कोई हानिकारक रासायनिक अवशेष नहीं** – विषाक्त पदार्थ मृदा में नहीं रहते हैं जो मिट्टी में जमा हो सकते हैं और फसलों को प्रभावित कर सकते हैं।

2. फसल लाभ

- ✓ **पोषक तत्वों के अवशोषण में सुधार करता है** – किण्वित खाद धीमी गति से और लगातार पोषक तत्व प्रदान करता है। साथ ही पोषक तत्वों के अवशोषण की दक्षता में सुधार करता है।
- ✓ **जड़ विकास को बढ़ाता है** – बेहतर पोषक तत्व अवशोषण के लिए मजबूत जड़ विकास को बढ़ावा देता है।
- ✓ **पौधों की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है** – लाभकारी सूक्ष्मजीव मिट्टी जनित रोगों और कीटों को दबाने में मदद करते हैं। कार्बनिक यौगिक कीटों और रोगों के लिए पौधों की प्रतिरोधक क्षमता को भी बढ़ाते हैं।
- ✓ **उपज और गुणवत्ता बढ़ाता है** – पोषक तत्वों की अधिक उपलब्धता से फसल की वृद्धि बेहतर होती है और उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार होता है।
- ✓ **रासायनिक उर्वरकों का पर्यावरण–अनुकूल विकल्प** – रासायनिक खाद पर निर्भरता कम करता है, जिससे खेती अधिक टिकाऊ बनती है।

3. पर्यावरणीय लाभ

- ✓ **ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करता है** – उचित किण्वन कच्चे खाद की तुलना में मीथेन और अमोनिया उत्सर्जन को कम करता है। रासायनिक उर्वरकों की तुलना में कार्बन पदचिह्न भी कम होता है।
- ✓ **रासायनिक अपवाह को कम करता है** – रासायनिक उर्वरक के उपयोग को कम करके जल प्रदूषण को रोकता है।
- ✓ **मिट्टी और जल प्रदूषण को कम करता है** – रासायनिक उर्वरकों के विपरीत, FOM नाइट्रेट लीचिंग का कारण नहीं बनता है, जो जल निकायों को दूषित करता है।

समृद्ध एफओएम और रासायनिक उर्वरक के बीच अंतर

समृद्ध एफओएम रासायनिक उर्वरकों का एक टिकाऊ और पर्यावरण–अनुकूल विकल्प है, जो पर्यावरणीय प्रभाव को कम करते हुए मिट्टी के स्वास्थ्य और दीर्घकालिक कृषि उत्पादकता को बढ़ावा देता है।

FOM उत्पादित कर रहे संयंत्रों की वर्तमान स्थिति

फरवरी 2025 में, कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय ने 1985 के उर्वरक (अकार्बनिक, जैविक या मिश्रित) (नियंत्रण) आदेश में संशोधन करके संपीड़ित बायोगैस (सीबीजी) संयंत्रों से प्राप्त "कार्बनिक कार्बन वर्धक" को उर्वरक की एक नई श्रेणी के रूप में शामिल किया। इस संशोधन से देश भर में किसानों और पर्यावरण दोनों को लाभ होने की संभावनाएं है। भारतीय बायोगैस एसोसिएशन (आई.बी.ए.) के अध्यक्ष ए.आर. शुक्ला ने संशोधन की सराहना करते हुए कहा कि इससे मिट्टी की सेहत में सुधार के साथ–साथ ग्लोबल वार्मिंग को कम करने में भी मदद मिलेगी। साथ ही बायोगैस संयंत्र में किण्वन प्रक्रिया के माध्यम से उत्पादित जैविक उर्वरक उद्योग को अतिरिक्त आय अर्जित करने में सक्षम बनाया जा सकता है।

भारत वर्तमान में लगभग 1 मिलियन मीट्रिक टन FOM का उत्पादन करता है, जो CBG संयंत्रों से प्राप्त होने वाला एक उपोत्पाद है। बायोगैस परियोजनाओं के विस्तार के साथ यह आँकड़ा 7 मिलियन मीट्रिक टन तक बढ़ सकता है, जो उर्वरक की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त होगा। सरकारी सहायता से जैविक उर्वरकों की माँग बढ़ेगी, जिससे और अधिक CBG संयंत्रों की स्थापना होगी। इससे बायोगैस उद्योग को लाभ होगा और 'वेस्ट–टू–वेल्थ' की पहल को बढ़ावा मिलेगा, जिससे अंततः आर्थिक विकास को बढ़ावा मिलेगा। भारतीय बायोगैस एसोसिएशन (IBA) किण्वित जैविक खाद का समर्थन करने के लिए SATAT (सस्ती परिवहन के लिए टिकाऊ विकल्प) जैसी योजना पर जोर दे रहा है। IBA के अनुमानों के अनुसार, SATAT के अपनी पूरी क्षमता तक पहुँचने के बाद केवल ठोस–FOM उद्योग द्वारा लगभग 2.6 अरब डॉलर का राजस्व उत्पन्न कर सकता है। यदि लिक्विड एफओएम को भी शामिल किया जाए, तो यह राजस्व 2–3 गुना बढ़ सकता है। वर्तमान में लगभग 97 कार्यात्मक सीबीजी संयंत्र हैं, जिनका औसत उत्पादन 7.5 टीपीडी (टन प्रति दिन) सीबीजी और 30 टीपीडी एफओएम प्रति संयंत्र है। प्रति वर्ष लगभग 1 मिलियन टन एफओएम का अनुमानित उत्पादन है, जिसमें 7 मिलियन टन प्रति वर्ष तक की उच्च क्षमता है। वर्तमान में, 570 सीबीजी संयंत्र हैं, जिनमें से 165 संयंत्र निर्माणाधीन हैं, जिनके इस वित्तीय वर्ष तक पूरा होने की उम्मीद है और 405 संयंत्रों का निर्माण अभी शुरू होना बाकी है। अतः आने वाले समय में FOM एवं LFOM भारतीय कृषि, किसानों की आय, मृदा स्वास्थ्य एवं पर्यावरण के लिए अति उपयोगी सिद्ध हो सकते है।

मृदा परीक्षण के लिए मृदा नमूना लेने की तकनीकें

प्रसेनजीत राय, एम.सी. मीना एवं देबाशीष मंडल
मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन संभाग

मृदा परीक्षण उपलब्ध पोषक तत्वों की स्थिति, मृदा अभिक्रिया तथा लवणता का आकलन करने के लिए एक स्वीकार्य, सटीक और त्वरित रासायनिक विश्लेषण है, जिसके आधार पर उपयुक्त उर्वरक सिफारिशें की जाती हैं। विभिन्न मृदा परीक्षण चरणों में मृदा का नमूना लेना और उसका प्रसंस्करण सबसे महत्वपूर्ण होता है। मृदा नमूने एकत्र करने के लिए किसान सम्मिश्र (कंपोज़िट) नमूना तकनीक अपना सकते हैं।

नमूना लेने की तकनीक

मृदा ढाल, रंग, बनावट, जल निकास आदि के संदर्भ में विषमता प्रदर्शित करती है। खेत/भूमि में इन भिन्नताओं की पहचान करना महत्वपूर्ण है। विस्तृत भूमि को ढाल, रंग, बनावट, जल निकास आदि को ध्यान में रखते हुए कई "मृदा नमूना इकाइयों" में विभाजित करना चाहिए। प्रत्येक "मृदा नमूना इकाई" से एक सम्मिश्र (कंपोज़िट) नमूना एकत्र किया जाना चाहिए।

कंपोज़िट नमूना कैसे तैयार करें?

किसी विशेष समरूप (होमोजीनियस) मिट्टी नमूना इकाई में, 15 से 20 कोर/फरो स्लाइस अलग-अलग यादृच्छिक स्थानों से लिए जाते हैं और उन्हें अच्छी तरह मिलाकर एक संयुक्त (कंपोज़िट) नमूना बनाया जाता है। कोर/फरो स्लाइस लेने के स्थानों का चयन ज़िगज़ैग (आड़े-तिरछे) तरीके से चलते हुए या यादृच्छिक रूप से किया जाता है, ताकि पूरे खेत/क्षेत्र/नमूना इकाई को कवर किया जा सकें।

मृदा नमूना इकाई का आकार

मृदा नमूना इकाई का आकार 1 एकड़ से अधिक न रखा जाए। यदि नमूना इकाई का आकार 0.5 एकड़ है, तो कोर/फरो स्लाइस की संख्या लगभग 8-10 हो सकती है। यदि नमूना इकाई बड़े क्षेत्र में ढलान/जल निकास/रंग आदि के संदर्भ में समान (एकरूप) है, तो इसका आकार 2.5 एकड़ (1 हेक्टेयर) तक हो सकता है।

भले ही मिट्टी बड़े क्षेत्र में एक समान दिखाई दे, फिर भी एक कंपोज़िट नमूने में 20 एकड़ (8 हेक्टेयर) से अधिक क्षेत्र से लिए गए कोर/फरो स्लाइस शामिल नहीं होने चाहिए। स्थानीय समस्या वाली मिट्टी (जैसे लवणीय/क्षारीय/लवणीय-क्षारीय) वाले क्षेत्रों को अलग मिट्टी नमूना इकाई के रूप में माना जाना चाहिए।

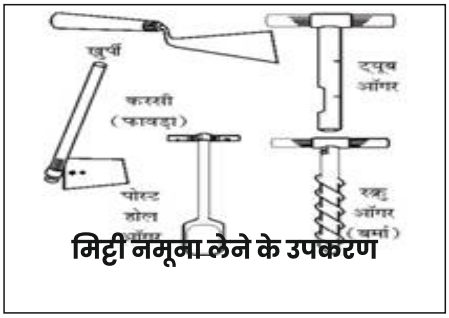

मिट्टी नमूना लेने के उपकरण

मिट्टी नमूना लेने के उपकरण

नमूना लेने के उपकरण आसानी से साफ किए जा सकने वाले, जंग-रोधी, मजबूत और उपयोग में सरल होने चाहिए। विभिन्न नमूना लेने के उपकरणों में खुरपी, फावड़ा, ऑगर (मिट्टी ड्रिल) शामिल हैं।

मिट्टी के कोर/फरो स्लाइस का संग्रह

जिस स्थान से मिट्टी का नमूना लेना है, उसे पहले फावड़े से साफ करें। वार्षिक फसलों वाले खेतों से मिट्टी के कोर लेने के लिए, कोर सैंपलर या स्टेनलेस स्टील/प्लास्टिक की नली को मिट्टी में 15 सेमी (6 इंच) तक डालें। फरो स्लाइस लेने के लिए, फावड़े की मदद से "V" आकार का 6 इंच गहरा गड्ढा बनाएं। गड्ढे की खुली सतह के दोनों ओर से ऊपर से नीचे तक ½ इंच मोटी मिट्टी की परत खुरपी से निकालें। मिट्टी के नमूनों को पॉलिथीन बैग या बाल्टी में एकत्र करें। नमूना

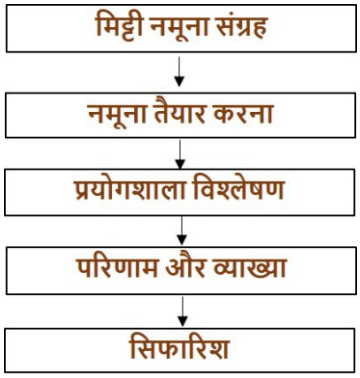

मिट्टी परीक्षण के चरण

इकाई के क्षेत्रफल के अनुसार, 8-10 या 15-20 स्थानों से मिट्टी के कोर/फरो स्लाइस एकत्र करें। एकत्रित नमूनों को मिलाकर कंपोज़िट मिट्टी नमूना तैयार करें। बागवानी / प्लांटेशन फसलों के लिए, जड़ों की गहराई के अनुसार कम से कम 1 मीटर गहरा गड्ढा खोदें। गड्ढे की खुली सतह से विभिन्न गहराइयों (0-15, 15-30, 30-60, 60-90 से.मी.) पर ½ इंच मोटी मिट्टी की परतें एकत्र करें।

मिट्टी कोर का संग्रह

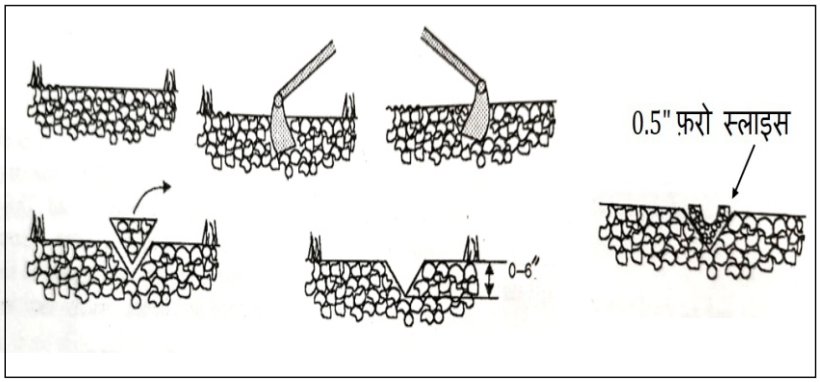

फरो स्लाइस का संग्रह

मिट्टी नमूना लेने का समय: नमूना कम से कम बुवाई या रोपाई से एक माह पहले तथा खाद/उर्वरक डालने से पहले लेना चाहिए। खड़ी फसल में नमूना कम से कम उर्वरक प्रयोग के 30 दिन बाद लेना चाहिए। नियम के अनुसार, यदि मिट्टी जुताई के लिए बहुत गीली है, तो वह नमूना लेने के लिए भी बहुत गीली है।

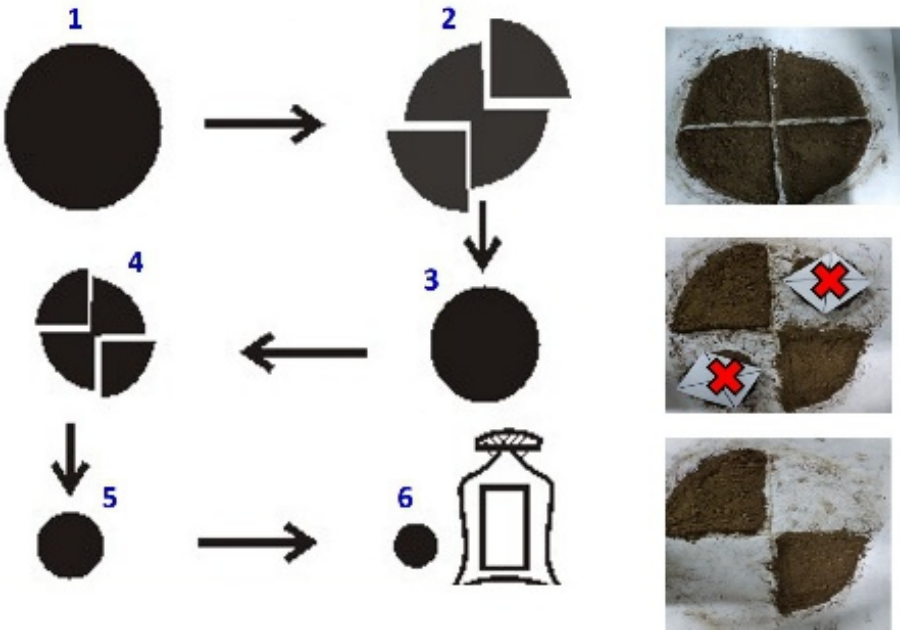

कंपोज़िट मिट्टी नमूने के लिए प्रसंस्करण: मिट्टी नमूना इकाई के भीतर 8-10 या 15-20 स्थानों से एकत्र किए गए मिट्टी के कोर/फरो स्लाइस को छाया में सुखाना चाहिए। इसके बाद उन्हें लकड़ी के ओखली (मार्टर) में पीसकर, पॉलिथीन शीट या कपड़े पर अच्छी तरह मिलाया जाता है। फिर क्वार्टरिंग (चार भागों में बांटने) की प्रक्रिया अपनाई जाती है, जब तक कि 500 ग्राम मिट्टी (कंपोज़िट नमूना) प्राप्त न हो जाए। कंपोज़िट मिट्टी नमूने पर सही लेबल लगाया जाना चाहिए (जिसमें किसान का नाम, पता, प्लॉट संख्या, नमूना लेने की गहराई/तारीख, मिट्टी/फसल की समस्या, फसल की जानकारी, सिंचाई सुविधा की उपलब्धता आदि शामिल हों) और इसे विश्लेषण के लिए नजदीकी मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला में भेजा जाना चाहिए।

क्वार्टरिंग के लिए पॉलिथीन शीट या कपड़े पर रखे मिट्टी के नमूने को चार भागों (क्वार्टर) में विभाजित किया जाता है। इनमें से दो विकर्ण रूप से विपरीत भागों को लिया जाता है और उन्हें अच्छी तरह मिलाया जाता है (बाकी दो भागों को हटा दिया जाता है)। यह प्रक्रिया तब तक दोहराई जाती है जब तक 500 ग्राम का कंपोज़िट नमूना प्राप्त न हो जाए।

यह महत्वपूर्ण है कि मिट्टी का नमूना मेड़ों (बंड) से नहीं लेना चाहिए (बंड से 2 मीटर की दूरी छोड़नी चाहिए)। भवनों के पास, पेड़ों के नीचे (छायादार स्थानों) तथा कम्पोस्ट गड्ढों के आसपास के क्षेत्रों से नमूना लेने से बचना चाहिए।

समन्वित पोषण प्रबंधन एवं मृदा स्वास्थ्य कार्ड

बिराज बंधु बसाक एवं देबाशीष मंडल
मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन संभाग

उर्वरक संबंधी कार्यक्रम एवं योजनाएं

मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना
परंपरागत कृषि विकास योजना
सतत कृषि राष्ट्रीय मिशन
राष्ट्रीय कृषि विकास योजना
प्रधानमंत्री भारतीय जन उर्वरक परियोजना
उर्वरक गुणवत्ता नियंत्रण प्रोग्राम
पी.एम. - प्रणाम (धरती माता के पुनर्स्थापन, जागरूकता, पोषण एवं सुधार) कार्यक्रम
फसल अवशेष प्रबंधन

मृदा स्वास्थ्य कार्ड के लाभ तथा विशेषताएं

- मृदा स्वास्थ्य कार्ड के सही उपयोग से किसान अपने खेत की मृदा उर्वरता एवं उत्पादकता बढ़ा सकते हैं।
- किसान अपने खेत की मिट्टी की उर्वरता का स्तर जान सकते है।
- किसान मिट्टी की गुणवत्ता के अनुसार फसल चयन करने में आसानी होती है और किसान ज्यादा मुनाफा प्राप्त कर सकते है।
- किसान खेतों में कम कीमत में ज्यादा पैदावार प्राप्त कर सकता है।
- किसान, मृदा स्वास्थ्य कार्ड के माध्यम से उर्वरकों का संतुलित प्रयोग कर मिट्टी की उपजाऊ क्षमता को बनाए रख सकते है।
- समस्याग्रस्त मृदाओं के लिए मृदा सुधारकों की सही मात्रा में अनुशंसा।
- फसल चक्र में हरी खाद तथा दलहनी फसलों का समावेश अवश्य करें।
- समूचे फसल चक्र के लिए उर्वरक प्रबन्धन करें।
- दलहनी फसलों में जैव उर्वरकों से बीजोपचार अवश्य करें।
- समन्वित पोषक तत्व प्रबन्धन करें अर्थात रासायनिक उर्वरकों के साथ साथ जैविक खादों एवं जैविक उर्वरकों को प्रयोग में लाएं।

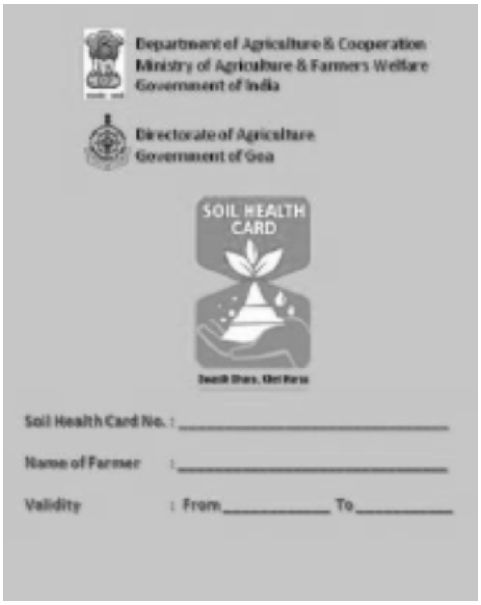

SOIL HEALTH CARD		
Farmer's Details		
Name		
Address		
Village		
Sub-District		
District		
PIN		
Aadhaar Number		
Mobile Number		
Soil Sample Details		
Soil Sample Number		
Sample Collected on		
Survey No.		
Khasra No. / Dag No.		
Farm Size		
Geo Position (GPS)	Latitude:	Longitude:
Irrigated / Rainfed		

Name of Laboratory				
SOIL TEST RESULTS				
S. No.	Parameter	Test Value	Unit	Rating
1	pH			
2	EC			
3	Organic Carbon (OC)			
4	Available Nitrogen (N)			
5	Available Phosphorus (P)			
6	Available Potassium (K)			
7	Available Sulphur (S)			
8	Available Zinc (Zn)			
9	Available Boron (B)			
10	Available Iron (Fe)			
11	Available Manganese (Mn)			
12	Available Copper (Cu)			

पूसा एस.टी.एफ.आर. मीटर डिजिटल पोर्टेबल मात्रात्मक किसानों के द्वार मृदा परीक्षण सेवा

देबरूप दास, मंदिरा बर्मन, एम.सी. मीना, डी. मंडल एवं वी.के. शर्मा
मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन संभाग

पूसा स्वायल टेस्ट फ़र्टिलाइज़र रिकमंडेशन मीटर

भा.कृ.अ.प.-भा.कृ.अ.स., नई दिल्ली द्वारा विकसित

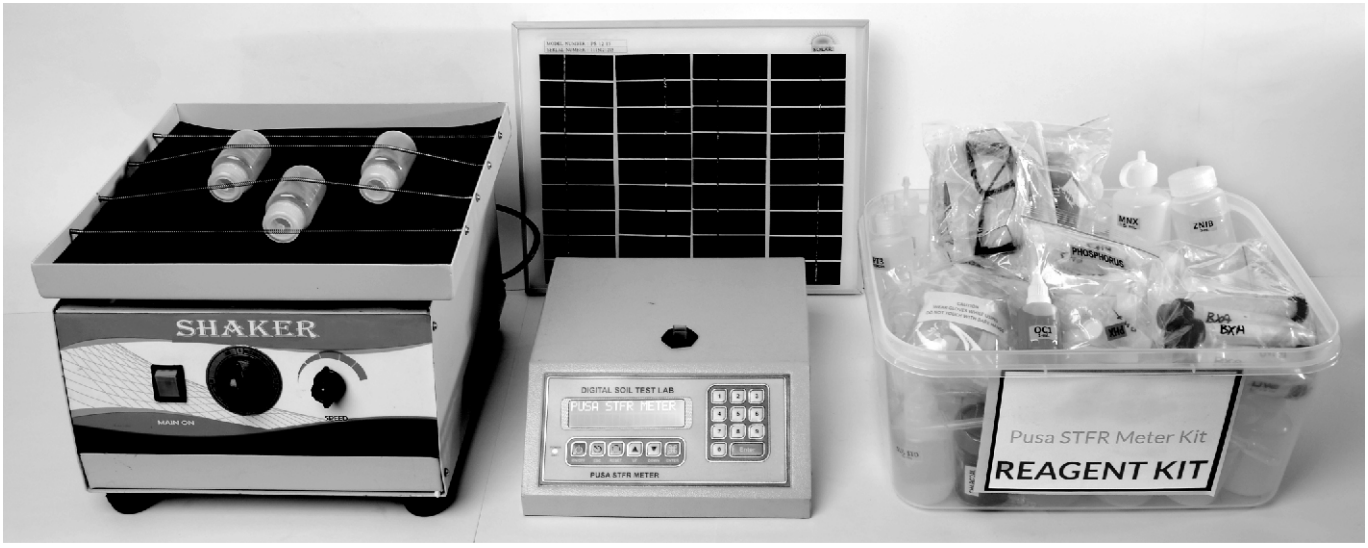

मृदा के 14 गुणों का विश्लेषण कर सकते है

100 फसलों के लिए उर्वरक-संस्तुति प्रदान करता है

बाज़ार में सुगमता से उपलब्ध

अब तक 21 कंपनियों को लाइसेंस दिया गया है

- पीएच
- ईसी
- जैविक कार्बन
- चूने की माँग
- जिप्सम माँग
- उपलब्ध नाइट्रोजन
- उपलब्ध फॉस्फोरस
- उपलब्ध पोटैशियम
- उपलब्ध सल्फर
- उपलब्ध बोरॉन
- उपलब्ध आयरन
- उपलब्ध मैंगनीज
- उपलब्ध जिंक
- उपलब्ध कॉपर

कृषि अवशेष प्रबंधन के लिए पूसा डिकम्पोज़र तकनीक और एसओपी

लिवलीन शुक्ला, डोलमानी अमात, संदीप कुमार सिंह, बृजेश कुमार मिश्र, कृष्णाशीष दास एवं राधा प्रसन्ना
सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग

- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान द्वारा विकसित पूसा डिकम्पोज़र कृषि अवशेष का तीव्र गति से विघटन एवं पर्यावरण संरक्षण में सहयोगी।
- यह तकनीक वर्तमान में कैप्सूल, तरल और वेटेबल पाउडर के रूप में उपलब्ध।
- वेटेबल पाउडर पराली को 18-20 दिनों में सड़ाकर खाद में बदल देता है, जिससे वायु प्रदूषण की समस्या में कमी।
- वेटेबल पाउडर से कैप्सूल की तुलना में तरल घोल बनाने के समय में 12-15 दिन की बचत।

पूसा डीकंपोजर वेटटेबल पाउडर को तरल रूप में परिवर्तित करना

750 ग्राम प्रति एकड़ 500 लीटर पानी के साथ

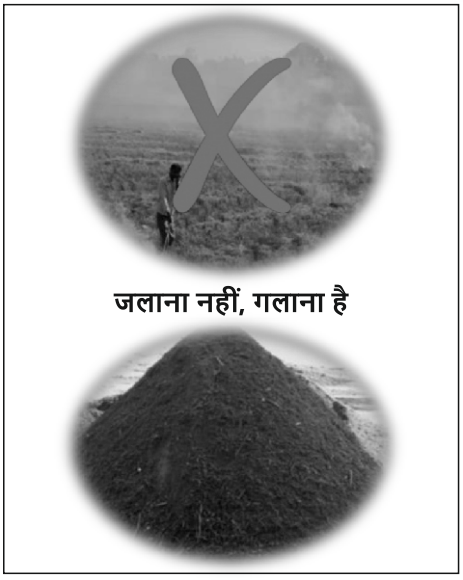

जलाना नहीं, गलाना है

छिड़काव

रोटावेटर/एम बी प्लाऊ/ मिक्सिंग करें

सिंचाई

अगली फसल की बुवाई (15-20 दिन)

इन-सीटू अपघटन

- पूसा डिकम्पोज़र वेटेबल पाउडर (750 ग्राम प्रति एकड़) 500 लीटर पानी के साथ तरल के रूप में बना कर एक एकड़ में प्रयोग करें।
- इस तरल को फसल कटाई के बाद खेतों में बचे बायोमास पर आसानी से छिड़का जा सकता है।
- इन-सीटू अपघटन के लिए छिड़काव के बाद मिट्टी में फसल अवशेषों को उचित मिश्रण के लिए रोटावेटर / एम बी प्लाऊ / डिस्क हैरो से जुताई करें।
- खेत में नमी सुनिश्चित करने के लिए हल्की सिंचाई करें।

एक्स-सीटू अपघटन

- जैविक खाद बनाने की विभिन्न विधियों में पूसा डिकम्पोज़र वेटेबल पाउडर का प्रयोग प्रभावकारी है।
- प्रयोग के लिए एक पैकेट डिकम्पोज़र को आवश्यकता अनुसार पानी (200-500 लीटर) में घोल बना कर लगभग 500 किलोग्राम अवशेष पर छिड़काव कर पलटाई करें।
- जैविक खाद बनाने की विधियाँ जैसे गड्ढे, ढेर या विंड-रो विधि द्वारा पूसा डिकम्पोज़र का उपयोग करके 45-90 दिनों के भीतर उच्च गुणवत्ता का देसी खाद बन जाता है।

पूसा डिकम्पोज़र के मुख्य लाभ	सावधानियाँ
फसल अवशेषों का तेजी से विघटन	सही समय पर छिड़काव करें
पराली जलाने की आवश्यकता नहीं	नमी का ध्यान रखें
मिट्टी की उर्वरता में सुधार	उचित मात्रा में प्रयोग करें
लागत में कमी	मशीन का सही उपयोग करें
प्राकृतिक और पर्यावरण-अनुकूल विधि	तापमान और मौसम का ध्यान रखें

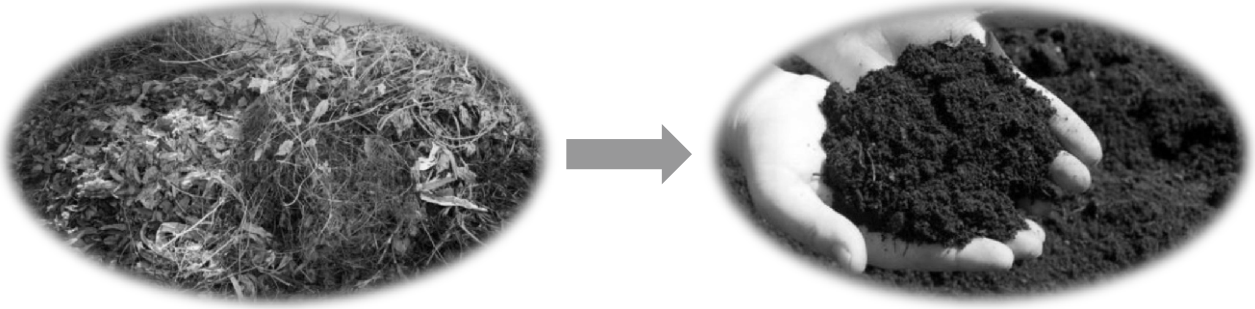

मूल्य: ◆ ₹ 100/पैकेट केवल किसानो के लिए (वेटेबल पाउडर) ◆ ₹ 50/ /पैकेट (कैप्सूल किट) ◆ ₹75/ लीटर (तरल)

पूसा जैव उर्वरक: फसलों में एकीकृत पोषक प्रबंधन के लिए एक प्रभावी पर्यावरण-हितैषी विकल्प

बृजेश कुमार मिश्र, कृष्णाशीष दास एवं राधा प्रसन्ना
सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग

"जैव उर्वरक सूक्ष्मजीवों का ऐसा जीवंत मिश्रण है जिसका बीज, जड़ों या मिट्टी में प्रयोग करने पर पौधों को अधिक मात्रा में पोषक तत्व उपलब्ध होते हैं"

- प्रमुख पोषक तत्वों जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम और पादप पादप वृद्धि प्रेरक
- मिट्टी की जैविक क्रियाशीलता एवं उपजाऊपन में वृद्धि
- रासायनिक उर्वरकों के उपयोग में 20-25% की कमी
- पर्यावरण पर दुष्प्रभाव कम और फसल उत्पादन लागत में कमी

1. **नाइट्रोजन पोषण:** पूसा राइजोबियम, पूसा एज़ोस्पिरिलम, पूसा बायोफोर्ट, पूसा एजोटोबैक्टर
   - धान, गेहूँ, मक्का, दलहन, तिलहन, फल एवं सब्जियां
   - 15-30 किग्रा नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की बचत
2. **फॉस्फोरस पोषण:** पूसा बायोफॉस
   - धान, गेहूँ, मक्का, दलहन, तिलहन, फल एवं सब्जियां
   - मृदा में अघुलनशील फॉस्फोरस की उपलब्धता में सुधार
   - 15-20 किग्रा फॉस्फोरस प्रति हेक्टेयर की बचत
3. **सभी प्रमुख पोषक तत्वों / अजैविक तनाव से सहनशीलता:** पूसा सायनोन्यूट्रिकॉन, पूसा साइनोफोर्ट, पूसा साइनोबायोकॉन, पूसा सम्पूर्ण, पूसा संजीवनी, पूसा बायोफोर्ट, पूसा ए आइ एम
   - धान, गेहूँ, मक्का, बाजरा, दलहन, तिलहन, फल, सब्जियां एवं संरक्षित खेती वाली फसलें
   - 15-20 किग्रा नाइट्रोजन, 20-25 किग्रा फॉस्फोरस, 10-15 किग्रा पोटॉश प्रति हेक्टेयर की उपलब्धता
   - नमी और लवणता तनाव सहनशीलता
4. **पोटाश और अन्य सूक्ष्मपोषक तत्व पोषण:** पूसा बायोपोटाश, पूसा बायोजिंक, पूसा बायोआयरन, पूसा बायोफोर्ट, पूसा सायनोन्यूट्रिकॉन
   - सभी फसलों के लिए
   - 10-15 किग्रा/हेक्टेयर पोटाश और 2-5 किग्रा / हेक्टेयर जिंक / लौह तत्व की बचत

वाहक आधारित जैव उर्वरक:

- एक पैकेट/एकड़ बीज उपचार के लिए
- 100 ग्राम गुड़/चीनी को पानी में उबालकर गाढ़ा घोल बनाएं
- घोल को बीज में मिलाकर छाया में सुखाएं

तरल जैव उर्वरक :

- एक बोतल/एकड़ बीज, पौध, उपचार
- 1 लीटर पानी में घोलकर बीजों पर छिड़कें
- बीजों को 30 मिनट हवा में सुखाकर बोएं

सूर्य प्रकाश व गर्मी से बचायें

सावधानियाँ
उपचारित बीजों को छाया में सुखायें

पैकेट को खोलने के बाद पूर्ण उपयोग करें

पूसा माइकोराइजा
आपकी फसल का प्राकृतिक साथी

सीमा सांगवान
सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग

पूसा माइकोराइजा लाभकारी कवक (फफूंद) है जो पौधों की जड़ों के साथ सहजीवी संबंध बनाकर पोषक तत्वों और पानी की उपलब्धता को बेहतर बनाता है।

किन फसलों में करें उपयोग ?

- फसलें : धान, मक्का, बाजरा, सोयाबीन, मूंगफली, गेहूं, जौ, मक्का, जई, चना, अलसी
- सब्ज़ियाँ : टमाटर, भिंडी, बैंगन, लौकी, कद्दू, हरी मिर्च
- वानिकी, बागवानी एवं पुष्पोद्यानिकी

पूसा माइकोराइजा के मुख्य लाभ

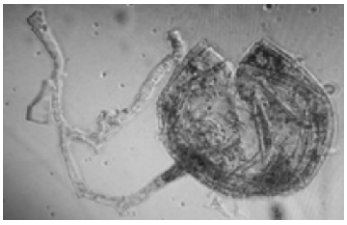

- जड़ों की वृद्धि और विकास को प्रोत्साहन
- फॉस्फोरस, जिंक तथा अन्य आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि, साथ ही सिंचाई की आवश्यकता में कमी
- पौधों को सूखा एवं रोग तनाव से लड़ने में सहायता
- रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता और उपयोग में कमी
- फसल की उपज एवं गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार

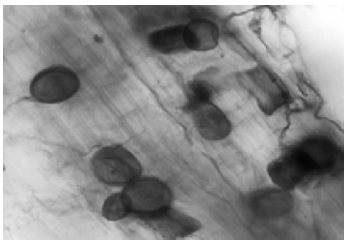

कैसे करें उपयोग

- खेत में: पूसा माइकोराइजा @ 5 किग्रा/एकड़, खाद के साथ मिलाकर या बीज के साथ डालें।
- नर्सरी: रोपाई से पहले जड़ों को 20–30 मिनट पूसा माइकोराइजा घोल में डुबोएँ।
- रोपाई की अवस्था: जड़ों को 50 ग्राम/लीटर पानी के घोल में 30 मिनट डुबोकर रोपें।
- बागवानी/वानिकी: 50–100 ग्राम/पौधा प्रयोग करें।
- बागवानी एवं वानिकी में बड़े पैमाने पर उपयोग करें।

सावधानियां

- पूसा माइकोराइजा को धूप तथा अधिक गर्मी से बचा कर रखें।
- कीटनाशकों तथा रासायनिक उर्वरकों के साथ न मिलाएं।

जैविक खाद बनाने की उन्नत तकनीकें

शिवा धर एवं रणबीर सिंह
सस्य विज्ञान संभाग

भारत में सदियों से विभिन्न जैविक खादें जैसे; गोबर की खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद आदि का प्रयोग विभिन्न फसलों में किया जाता रहा है। वर्तमान में रासायनिक खादों के प्रयोग से मृदा स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। इस दुष्प्रभाव को कम करने के लिए रासायनिक खादों के साथ–साथ जैविक खादों का उपयोग करने से मृदा उत्पादन क्षमता को बनाए रखा जा सकता है। जैविक खेती के लिए जैविक खादों का प्रयोग अति आवश्यक है, क्योंकि जैविक कृषि में रासायनिक खादों का प्रयोग वर्जित है। ऐसी स्थिति में पौधों को पोषक तत्व की पूर्ति के लिए जैविक खादों, हरी खाद व फसल चक्र अपनाना आवश्यक है।

जैविक खादों का उत्पादन एक घरेलू, व्यवसाय बन रहा है, इसके द्वारा कम निवेश या पूंजी से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इस उद्देश्य हेतु उत्पादन तकनीकों की जानकारी होना आवश्यक है। फसलों के अवशेष, घास–फूस, वृक्षों की पत्तियां, पशुओं का मल–मूत्र, मृत जीव–जन्तु, कार्बनिक अपशिष्ट जीवांश, आदि कार्बनिक पदार्थ कहलाते हैं। उचित मृदा नमी में सूक्ष्म जीवाणुओं के द्वारा अपशिष्ट पदार्थ सड़–गल जाते हैं तथा इससे जीवांश कार्बन प्राप्त होता है।

जैविक कम्पोस्ट व खादों को बनाने में प्रयुक्त सामग्री

खेती बागवानी, पशुपालन तथा घरेलू क्रियाकलापों से उत्पादित सभी व्यर्थ पदार्थ जैविक कम्पोस्ट बनाने में प्रयोग किये जाते हैं। उदारणार्थः–

- कृषि अवशेष जैसे धान, गेहूँ, सोयाबीन, मक्का, बाजरा, लोबिया, मसूर आदि की पत्तियाँ, पुआल, भूसा, फार्म अवशिष्ट, सब्जी उद्यान से प्राप्त अवशेष एवं खरपतवार इत्यादि।
- पार्क एवं लॉन से निकली घास, खरपतवार, पेड़–पौधों की कटाई–छटाई से प्राप्त वनस्पतियाँ एवं पत्तियाँ इत्यादि।
- पशुपालन से प्राप्त गोबर, मूत्र, बिछावन एवं सड़ा–गला चारा इत्यादि।
- सभी प्रकार से सड़ने योग्य वानस्पतिक पदार्थ जो कि खेत, पार्क, लान, आदि में पैदा होते हैं।

जैविक खाद बनाने की विधियाँ

जैविक खाद बनाने की मुख्यतः दो विधियां होती हैं–वायवीय तथा अवायवीय। इनमें अवायवीय विधि धीमी तथा गड्ढ़े में बनाई जाती है। वायवीय विधि में मुख्यतः समतल सतह पर पंक्तियों में ढेर बनाकर उनमें वायु का संचार किया जाता है।

वायवीय विधि से कम्पोस्ट बनाने की विन्ड रो तकनीक

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली द्वारा कृषि अवशेषों तथा अन्य सड़ने वाले अवशेषों का उपयोग कर, कम समय एवं लागत में अधिक गुणवत्ता वाली कम्पोस्ट बनाने की विन्ड रो विधि विकसित की गई है। यह विधि सभी स्तरों पर बहुत उपयोगी सिद्ध हो रही है।

विन्ड रो विधि में प्रयुक्त सामग्रीः खेतों से प्राप्त सभी फसलों के अवशेष, पत्तियों, घास–फूस, पशुओं का मल–मूत्र एवं बिछावन, चारे के अवशेष, फल–सब्जियों के छिलके, हरियाली पार्क एवं बाग–बगीचों की कटाई–छंटाई के अवशेष, पतझड़ से प्राप्त पत्तियां, फूल आदि कम्पोस्ट के लिए प्रयुक्त होते हैं। न सड़ने वाले पदार्थ जैसे; प्लास्टिक, रबर, धातु, पॉलीथीन, कांच इत्यादि को प्रारम्भ से ही अलग कर दिया जाता हैं।

विन्ड रो विधि में प्रयुक्त मशीन एवं यंत्रः छोटे स्तर पर कम मात्रा में कम्पोस्ट बनाने के लिए फावड़ा, तसला, टोकरी, रेक

इत्यादि से काम चल जाता है। बड़े पैमाने पर श्रम एवं समय की बचत के लिए ट्रैक्टर, चालित मशीनें भी उपयोग की जाती है। इन मशीनों से पलटाई तथा सभी पदार्थों को सुचारु रूप से मिलाने के लिए 'कम्पोस्ट टर्नर कम मिक्सर' मशीन तथा कच्चे एवं तैयार पदार्थों को यथा–स्थान रखने एवं ट्रक आदि में भरने हेतु 'लोडर' बड़े आकार की शाखाओं को वांछित आकार या छोटा करने हेतु 'श्रेडर' तथा तैयार खाद को छानने हेतु विभिन्न क्षमता वाली 'छनाई मशीनों' की आवश्यकता होती है।

जैविक खाद तैयार करने के विभिन्न चरण

1. सर्वप्रथम फसल अवशेषों को लम्बाई में ढेर (विन्ड रो) बनाया जाता है। इसकी ऊँचाई व चौड़ाई 2.0 से 2.5 मी. तथा लम्बाई उपलब्ध जगह के अनुसार 10 से 100 मीटर या उससे अधिक रखी जाती है। इस सामग्री में भार के आधार पर 80 प्रतिशत फसल अवशेष तथा 20 प्रतिशत ताजा गोबर मिला सकते हैं। यदि गोबर उपलब्ध न हो तो भी खाद को आसानी से बना सकते हैं। धान अथवा अन्य फसलें जैसे; कपास, अरहर आदि के अवशेषों को श्रेडर मशीन द्वारा 8 से 10 सें.मी. छोटा कर लेते हैं।
2. इन विन्ड रो पर सूक्ष्मजीवीय कल्चर के चूर्ण या द्रव का छिड़काव किया जाता है। यह कल्चर आजकल सरकारी संस्थानों तथा प्राइवेट एजेंसियों पर भी मिल जाता है।
3. कल्चर डालने के तुरन्त बाद पहली पलटाई करते हैं, जिससे कल्चर सभी पदार्थों में अच्छे से मिल जायें। द्वितीय पलटाई 10 दिन बाद, तीसरी 25 दिन बाद, चौथी 40 दिन बाद तथा पांचवीं 55–60 दिन पर करते हैं। पलटाइयों का अन्तर तथा संख्या विभिन्न प्रकार के अवशेषों के आधार पर कम या अधिक हो सकती है।
4. विभिन्न पलटाइयों के बीच समय–समय पर विन्ड रो में नमी का स्तर ज्यादा बनाये रखने के लिए पानी का छिड़काव करते हैं तथा विन्ड रो के आकार को सही करते हैं।
5. प्रयुक्त सामग्री के अनुसार 60 से 70 दिन में कम्पोस्ट खेत में डालने के लिए तैयार हो जाता है। यादि कम्पोस्ट को तुरन्त प्रयोग न करना हो तो बड़े आकार के ढेर बनाकर तथा ढक कर रखा जा सकता है। इससे पोषक तत्वों का ह्रास कम होता है।

तैयार कम्पोस्ट में पोषक तत्वों की मात्रा कम्पोस्ट बनाने में प्रयुक्त पदार्थों पर निर्भर करती है। इस प्रकार से तैयार कम्पोस्ट में गोबर की खाद की तुलना में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश तथा अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। यह कम्पोस्ट संतुलित तत्वों से परिपूर्ण एक उत्कृष्ट मृदा सुधारक होता है। यह भूमि में जीवांश की मात्रा को बढ़ाकर जैविक एवं भौतिक दशा को सुधारकर भूमि को उर्वर बनाती है। इससे खेत, पार्क, उद्यान तथा संस्थान के परिसरों आदि स्थानों पर सड़ने योग्य कूड़े–कचरे से बहुमूल्य खाद बनाई जा सकती है। इस प्रकार बहुमूल्य खाद बनाने के साथ–साथ वातावरण को स्वच्छ रखने में सहायता मिलती है।

जैविक खादों के प्रकार

1. कम्पोस्टः कूड़ा–कचरा, मृदा, राख, भूसा, बचा हुआ चारा, पौधों के डंठल, पुआल, घास, सूखी सब्जियों के के पत्ते खरपतवार जिनमें बीज ना बना हो, जड़े, गौशाला का चारा व पशुओं तथा मानव के मल–मूत्र को मिला कर व सड़ा–गला कर तैयार किए गए खाद को कम्पोस्ट खाद कहते हैं। कम्पोस्ट बनाने की प्रक्रिया के अंतर्गत जैविक अपशिष्ट को जैविक खाद में बदल दिया जाता है।

कम्पोस्ट खाद तैयार करने की विधिः कम्पोस्ट खाद तैयार करने के लिए हवादार (एयरोबिक) तथा बिना हवादार (ऐनएयरोबिक) दोनों ढंग काम में लिए जाते हैं। हवादार विधि में एक ढ़ेर के रूप में तथा बिना हवादार में खाद गड्ढ़ों में तैयार की जाती है। ढ़ेर के रूप में तैयार करने के लिए सड़ाने वाले जीवाणुओं को खुली हवा या ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। इसलिए इस विधि को एयरोबिक कहते हैं।

2. गोबर की खाद (एफ. वाई. एम.): गोबर की खाद (फार्म यार्ड मैन्योर) सर्वश्रेष्ठ तथा सबसे अधिक मात्रा में प्रयोग होने वाली जैविक खाद है। गोबर की खाद को पशुओं, जैसे; गाय, भैंस, घोड़ा, सूअरों, मुर्गी एवं बत्तख इत्यादि के ठोस तथा द्रव मलमूत्र को किसी पोषक पदार्थों से साधारणतः बिछावन, भूसा, पुआल, पेड़–पौधों की पत्तियाँ, रेत व लकड़ी का बुरादा आदि से मिलाकर तैयार करते हैं अथवा उपलब्ध गोबर व कृषि अवशेष से लम्बाई में ढेर बनाकर 2 से 3 बार पलटाई करके उत्तम खाद तैयार कर सकते हैं। यह खाद सर्वाधिक प्रचलित खादों में से एक है। परम्परागत खाद तैयार करने में 5 से 8 माह का समय लगता है। लेकिन एरोबिक विधि से खाद 30 से 35 दिनों में तैयार हो जाती है। इस विधि से खाद में खरपतवारों के बीज नष्ट हो जाते हैं तथा खाद में दीमक भी नहीं लगती। उचित मात्रा में तापमान व नमी मिलने से सूक्ष्मजीवाणुओं की सक्रियता पुरानी विधि की तुलना में तीव्र रहती है। अच्छी तरह से गलने व सड़ने के कारण पोषक तत्व शीघ्र व संतुलित मात्रा में फसल को प्राप्त होते हैं। सही रूप से तैयार खाद में नत्रजन 0.4–0.6, फॉस्फोरस 0.2–0.4 प्रतिशत, पोटाश की मात्रा 0. 5–0.9 प्रतिशत व अन्य

सूक्ष्म पोषक तत्व भी उचित मात्रा में पाये जाते हैं। गोबर की खाद, फसल के लिए पोषक तत्वों का महत्वपूर्ण और बेहतर स्रोत है।

3. फसल अवशेष खादः इस खाद को विभिन्न फसलों के अवशेष को मिलाकर अथवा एक–एक फसल अवशेष के अलग–अलग खाद तैयार की जाती है। इस प्रकार की खाद में विभिन्न अनुपातों में गोबर तथा फसल अवशेष मिलाकर खाद बनाई जाती है।

4. पत्तियों की खादः विभिन्न पेड़–पौधों की पत्तियाँ, कटाई–छटाई से प्राप्त छोटी–मोटी टहनीयां आदि से खाद बनाई जाती है। इस प्रकार की खाद नर्सरी तथा गमलों में लगे पौधों के लिए उत्तम होती है।

5. केंचुआ खाद (वर्मीकम्पोस्ट): जैव पदार्थ उपयोग इकाई में केंचुआ खाद बनाने की सस्ती तथा आसान विधियां विकसित की गई है, वर्मीकम्पोस्ट बनाने के लिए किसी भी प्रकार के पात्र जैसे; मिट्टी के बर्तन, वर्मी बैग, लकड़ी के बक्से इत्यादि का उपयोग किया जा सकता है। इस प्रक्रिया का भूमि में गड्ढ़े (पिट) बना कर या क्यारी (कम्पोस्टिंग बेड) बना कर भी किया जा सकता है। गड्ढ़े या क्यारी की चौड़ाई 1.0 मीटर रखी जाती है तथा इसकी लंबाई स्थान की उपलब्धता के अनुसार होती है। इसके पश्चात् उपरोक्त पिट या बेड पर एक हजार केंचुए प्रति वर्ग मीटर की दर से ऊपरी सतह पर छोड़कर बोरी, टाट या भूसे से ढक देते हैं। इन बोरियों, घास या भूसे पर पानी छिड़कते रहें ताकि नमी का स्तर 40 से 60 प्रतिशत तक बना रहे। केंचुए की खाद बनाने हेतु कम लागत से बेड बनाने की कई विधियाँ विकसित की गई हैं। इनमें खुली ईंट से बनी बेड की लागत पक्की नाली की लगभग 1/10 आती है। इसके अलावा ईंटों की जगह हम फसल अवशेषों का घेरा बनाकर वर्मीबेड बना सकते हैं। केंचुओं को तैयार खाद से अलग करने में काफी श्रमिक लगते हैं। जैव पदार्थ द्वारा विकसित उपयोग इकाई स्थान परिवर्तन विधि से इस लागत को कम किया गया है।

जैविक खादें, जैविक पदार्थों से बनाई जाती हैं, ये खादें पर्यावरण संतुलन को बनाये रखने में मद्द करती हैं व मृदा उर्वरता बढ़ाती है, जैविक खादों से मृदा नमी को लम्बे समय तक संरक्षित रखा जा सकता है, साथ ही मृदा कटाव को भी कम किया जा सकता है। प्रकृति में पाये जाने वाले तथा कृषि क्रियाओं में उत्सर्जित कार्बनिक अपशिष्टों को खेतों में सही विधि एवं समय से प्रयोग करने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त खादें, मृदा तापमान स्थिर रखने तथा नमी बनाये रखने में सहायता करती है। यह मृदा में उच्च कार्बनयुक्त पदार्थों को बनाये रखने में भी सहायक है। अतः जैव पदार्थ उपयोग इकाई में विकसित विभिन्न विधियों से हम भरपूर गुणवत्ता वाली खादें सुगमता से बनाकर अधिक लाभ कमा सकते हैं तथा पर्यावरण को भी संरक्षित रख सकते हैं।

प्राकृतिक खेती

दिबाकर महन्त, ऋषि राज, संजय सिंह राठौर एवं शिवा धर
सस्य विज्ञान संभाग

हरित क्रांति तकनीकों के कृषि पारिस्थितिकी तंत्र पर दुष्प्रभाव आज एक विकराल समस्या बनते जा रहे हैं। रासायनिक उर्वरक और कीटनाशकों के प्रयोग से मिट्टी में मौजूद लाभकारी सूक्ष्म जीवों की संख्या लगातार घट रही है। जिससे मिट्टी का स्वास्थ्य प्रभावित हो रहा है। इसके अलावा पिछले दशकों में कीटनाशकों और उर्वरकों की कीमत 6 गुना तक बढ़ गई है। इसके कारण कुल आय बढ़ाने पर भी शुद्ध आय कम हो रही है। प्राकृतिक खेती द्वारा उपरोक्त समस्याओं का समाधान संभव है। प्राकृतिक खेती में फसलों, वृक्षों, पशुपालन आदि को कृषि–पारिस्थितिकी को ध्यान में रखकर एकीकरण करके रसायन मुक्त खेती करना होता है। यह कार्यात्मक जैव विविधता के इष्टतम उपयोग की अनुमति देता है, जो किसानों द्वारा तैयार किए गए ऑन–फार्म लागत (इनपुट) के उपयोग को प्रोत्साहित करता है। यह काफी हद तक बायोमास आच्छादन, ऑन–फार्म गाय के गोबर–मूत्र के उपयोग; मिट्टी में वायु संचरण को बनाए रखना और सभी सिंथेटिक रासायनिक इनपुट को प्रयोग नहीं करना पर आधारित है। देशी गाय प्राकृतिक खेती प्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जापानी किसान और दार्शनिक मासानोबू फुकुओका ने 1970 के दशक में प्राकृतिक खेती की शुरुआत की थी। इस शब्द का सार यह है कि प्रकृति स्वयं खेती की प्रक्रिया का ख्याल रखती है। प्रसिद्ध प्राकृतिक खेती समर्थक पद्मश्री सुभाष पालेकर द्वारा विकसित तकनीक भारत में लोकप्रिय है। इस पद्धति में बहुत कम बाहरी सामग्री की आवश्यकता होती है।

प्राकृतिक खेती की अवधारणा

फसलों को लगभग 98 प्रतिशत पोषक तत्व हवा, पानी और सूरज की रोशनी से मिलते हैं। बाकी 2 प्रतिशत पोषक तत्व अच्छी गुणवत्ता वाली मिट्टी जिसमें बहुत सारे अनुकूल सूक्ष्मजीव हों के द्वारा मिल सकते हैं। मिट्टी को हमेशा जैविक आच्छादन से ढका होना चाहिए, जो ह्यूमस बनाता है और अनुकूल सूक्ष्मजीवों के विकास को बढ़ावा देता है। स्वस्थ मिट्टी के जीवाणु समूह मिट्टी के कार्बनिक पदार्थों को बनाए रखने और बढ़ाने में सहायक होते हैं । मिट्टी के लाभकारी सूक्ष्मजीवों को बढ़ाने के लिए विभिन्न प्रकार के मिश्रण आवश्यक हैं। इनमें सबसे लोकप्रिय 'जीवामृत, घनजीवामृत हैं जो देशी गाय के गोबर, मूत्र के किण्वन और अदूषित मिट्टी के मिश्रण से तैयार किए जाते हैं। मिट्टी में रासायनिक और जैविक खाद नहीं डाली जाती है। प्राकृतिक खेती में, सूक्ष्मजीवों और केंचुओं द्वारा कार्बनिक पदार्थों के अपघटन को मिट्टी की सतह पर ही प्रोत्साहित किया जाता है, जो समय के साथ धीरे–धीरे मिट्टी में पोषण बढ़ाता है। यह प्रक्रिया मिट्टी और पर्यावरण के स्वास्थ्य को सुधारती हैं, और किसानों की आय बढ़ाने के साथ–साथ ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करती है। प्राकृतिक कृषि में कुछ वनस्पतियों से निर्मित सामग्री का उपयोग कीटों और बीमारियों को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। इस खेती में, एकल फसल पद्धति की तुलना में बहु–फसल पद्धति को प्रोत्साहित किया जाता है।

प्राकृतिक खेती के घटक

1. बीजामृत, जीवामृत, घनजीवामृत

बीजामृत का प्रयोग बुवाई से पहले बीज के उपचार के लिए किया जाता है, जिसमें गाय का गोबर, मूत्र, चूना और अबाधित मेड़ों या जंगल या पेड़ के पास की मिट्टी का प्रयोग किया जाता है, जो पौधों की वृद्धि को बढ़ावा देता है और फसलों को

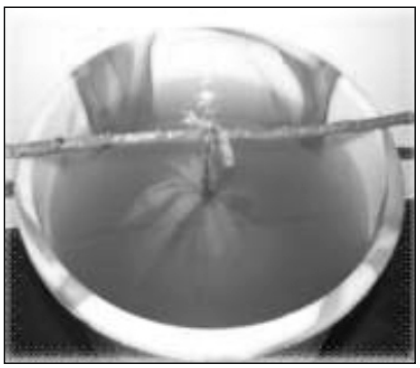
बीजामृत

जीवामृत

घनजीवामृत

हानिकारक बीज जनित और मिट्टी जनित रोगों से बचाता है। कई लाभदायक सूक्ष्मजीव और स्थानीय केंचुए फसल के पौधों को खनिज और आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाने में सहायक होते हैं। निरंतर रासायनिक खेती के कारण ये विलुप्त होते जा रहे हैं। उन्हें फिर से स्थापित करने के लिए, गाय का गोबर, गोमूत्र और अबाधित मेड़ों या जंगल या पेड़ के पास की मिट्टी के साथ गुड़ एवं बेसन के द्वारा बनाए जाने वाले जीवामृत का उपयोग एकमात्र वैकल्पिक उपाय है । गाय के गोबर, मूत्र और मिट्टी के सूक्ष्मजीवों को क्रमशः गुड़ एवं बेसन से मिलने वाले कार्बन और नत्रजन की आपूर्ति से पोषण मिलता है। घनजीवामृत भी जीवामृत के समान उपरोक्त अवयवों से तैयार केक की तरह एक ठोस होता है। यह मिट्टी में जीवामृत के समान ही सूक्ष्मजीवों की आपूर्ति करता है। घनजीवामृत को बुवाई से पहले प्रयोग किया जाता है लेकिन जीवामृत को खड़ी फसल पर छिड़का जाता है।

2. आच्छादन

फसल अवशेषों का उपयोग प्राकृतिक खेती में फसलों की पंक्तियों के बीच मिट्टी की सतह पर आच्छादन के रूप में किया जाता है। प्राकृतिक खेती में आच्छादन दो महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पहला, अपघटन और खनिजीकरण के माध्यम से पोषक तत्व प्रदान करना। दूसरा, एनेसिक केचुओं की गतिविधि के लिए अँधेरा एवं नम वातावरण प्रदान करके अनुकूल सूक्ष्म जलवायु का निर्माण करना, जो मिट्टी की सतह से लगभग 2 मीटर गहराई पर रहते है। आच्छादन के उपयोग से बनी सूक्ष्म जलवायु सूक्ष्मजीवों के लिए अनुकूल 25 से 32 डिग्री सेल्सियस तापमान और मिट्टी में 65 से 72 प्रतिशत नमी बनाए रखता है। एनेसिक केंचुए 2 मीटर तक अर्ध–स्थायी ऊर्ध्वाधर बिल बनाता है, जो जड़ों की बेहतर श्वसन के लिए वायु संचार में सुधार करता है, तथा दलहनी फसलों द्वारा नत्रजन स्थिरीकरण को बढ़ाता है। केंचुए गहरी परत से पोषक तत्वों को पुनः चक्रित करते हैं तथा आच्छादन को विघटित करने में भी मदद करते हैं। जीवामृत का छिड़काव न केवल पोषक तत्व और वृद्धि को बढ़ावा देने वाले पदार्थ प्रदान करता है, बल्कि नत्रजन को समृद्ध करने और आच्छादन से पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाने में भी मदद करता है। आच्छादन की उपस्थिति में जीवामृत का प्रभाव अकेले छिड़काव की तुलना में कई गुना बढ़ जाता है।

3. व्हापासा

यदि मिट्टी में व्हापासा (वायु संचार) नहीं होगा तो पौधे मर जाएंगे। जड़ों को पानी की नहीं, वाष्प की जरूरत होती है। यदि मिट्टी के सभी छिद्र पानी से भर जाएंगे तो मिट्टी से वायु निकल जाएगी। सूक्ष्मजीवों और फसलों की जड़ों को हवा नहीं मिल पाती जिससे फसलें पीली पड़ जाती हैं और वे मर जाती है। अगर हमें फसल की उपज बढ़ानी है, तो फसल का खाद्य भंडारण बढ़ाना होगा। तना भोजन संग्रहीत करता है। इसलिए, तने का व्यास बढ़ाना होगा। तने का व्यास जड़ों के क्षैतिज विस्तार से संबंधित है। अधिक भोजन संग्रहीत करने के लिए तने के व्यास को बढ़ाने के लिए जड़ों का क्षैतिज वितरण बढ़ाया जाना चाहिए।

– **दोपहर के समय** वैकल्पिक नालियों में सिंचाई के पानी के प्रयोग से **व्हापासा बनता** है।

– जड़े वाष्प एकत्र करने के लिए उन नालियों में चली जाती है जो उनके क्षैतिज विस्तार मे मदद करती है और अततः तने का व्यास बढ़ाती है। इसलिए, फसल की उपज बढ़ाने में व्हापासा बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

4. अन्तःफसल

अन्तःफसल के लिए घटक फसलों का चुनाव उनकी ऊपरी और निचली संरचना में अंतर को ध्यान में रखकर किया जाता है। आम तौर पर, अन्तःफसल का एक घटक एक दलहनी फसल होती है, जो सह फसल और बाद की फसलों के नत्रजन पोषण को बढ़ाती है। अन्तःफसल को जीवित आच्छादन के रूप में भी जाना जाता है।

5. वानस्पतिक कीटनाशकों के माध्यम से फसल सुरक्षा

नीमास्त्र का छिड़काव फसलों पर एफिड्स, जैसिड्स, मीली बग्स, थ्रिप्स, सफेद मक्खी, छोटे कैटरपिलर और अन्य चूसने वाले कीटों को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। अग्निअस्त्र का उपयोग फसल के तना छेदक एवं फल भेदक और अन्य विभिन्न प्रकार के कैटरपिलर को नियंत्रण करने के लिए किया जाता है। ब्रह्मास्त्र का उपयोग फसलों के बड़े आकार के छेदक और कैटरपिलर को नियंत्रण करने के लिए किया जाता है। दशपर्णी अर्क फसलों और बागों के सभी प्रकार के कीटों को नियंत्रण करने के लिए उपयोगी है।

– प्राकृतिक खेती प्रमाणन प्रणाली (एनएफसीएस)

प्राकृतिक खेती की प्रमाणीकरण की प्रक्रिया बहुत ही आसान है तथा इसमें किसी बाह्य संस्था की आवश्यकता नहीं होती है इसमें सदस्यों की सहभागिता तथा विश्वास से स्थानीय संस्थाओं द्वारा प्रमाणीकरण होता है। प्राकृतिक खेती प्रमाणन प्रणाली स्वैच्छिक और गैर–बाध्यकारी होगी। एनएफसीएस कार्यक्रम कृषि और किसान कल्याण विभाग, कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार के नियंत्रण और मार्गदर्शन के तहत संचालित किया जाता है।

– भारत में प्राकृतिक खेती का वर्तमान परिदृश्य

भारत में प्राकृतिक खेती के अंतर्गत कुल क्षेत्रफल 9.5 लाख हेक्टेयर है। प्राकृतिक खेती करने वाले किसानों की कुल संख्या 20. 1 लाख है। प्राकृतिक खेती के अंतर्गत सबसे अधिक क्षेत्रफल आंध्र प्रदेश (2.9 लाख हेक्टेयर) में है, उसके बाद गुजरात (1.9 लाख हेक्टेयर) और मध्य प्रदेश (1.1 लाख हेक्टेयर) का स्थान आता है। प्राकृतिक खेती करने वाले अन्य प्रमुख राज्य छत्तीसगढ़, केरल, हिमाचल प्रदेश, झारखंड, ओडिशा, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और तमिलनाडु हैं।

– प्राकृतिक खेती का दायरा

कई अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि प्राकृतिक खेती से उत्पादन में वृद्धि, स्थिरता, जल की बचत, मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार होता है। कभी–कभी प्राकृतिक खेती के अंतर्गत दलहनी फसलों से उत्पादन पारंपरिक प्रणाली की तुलना में काफी अधिक होता है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के सस्य विज्ञान संभाग में किए गए शोध से पता चलता है कि प्राकृतिक खेती से अरहर की उपज में अनुशंसित रासायनिक उर्वरकों की तुलना में 29 प्रतिशत अधिक उपज प्राप्त हुई। वर्षा आधारित और शुष्क भूमि वाले क्षेत्रों में, जहाँ श्रीअन्न, दालें और कम नत्रजन की आवश्यकता वाली फसलें होती हैं, उन क्षेत्रों में प्राकृतिक खेती उपयोगी सिद्ध हो सकती है। इसे ग्रामीण विकास के लिए लागत प्रभावी पद्धति माना जा सकता है। यह रोजगार पैदा करके ग्रामीण युवाओं के पलायन को रोकता है। प्राकृतिक खेती खाद्य असुरक्षा, किसानों के संकट और भोजन और पानी में कीटनाशक और उर्वरक अवशेषों, जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक आपदाओं के कारण उत्पन्न होने वाली स्वास्थ्य समस्याओं का समाधान करती है।

प्राकृतिक खेती में पोषक तत्व प्रबंधन और जैविक कीट नियंत्रण: एक समग्र एवं टिकाऊ कृषि दृष्टिकोण

गौरव पपनै, राजीव कुमार सिंह, बिजय कुमार नंदा, भरत सिंह
कृषि विज्ञान केंद्र, शिकोहपुर, गुरुग्राम

प्राकृतिक खेती क्या है ?

प्राकृतिक खेती कृषि की प्राचीन पद्धति है। यह भूमि के प्राकृतिक स्वरूप को बनाए रखती है। प्राकृतिक खेती को कृत्रिम रासायनिक मुक्त खेती के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें केवल प्राकृतिक आदानों का उपयोग करता है। प्राकृतिक खेती में रासायनिक कीटनाशक का उपयोग नहीं किया जाता है। इस प्रकार की खेती में जो तत्व प्रकृति में पाए जाते है, उन्हीं को खेती में पोषक तत्व के रूप में काम में लिया जाता है।

प्राकृतिक खेती में पोषक तत्वों के रूप में गोबर की खाद, कम्पोस्ट, जीवाणु खाद, फ़सल अवशेष और प्रकृति में उपलब्ध खनिज जैसे- रॉक फास्फेट, जिप्सम आदि द्वारा पौधों को पोषक तत्व दिए जाते हैं। प्राकृतिक खेती में प्रकृति में उपलब्ध जीवाणुओं, मित्र कीट और जैविक कीटनाशक द्वारा फ़सल को हानिकारक जीवाणुओं से बचाया जाता है।

प्राकृतिक खेती की आवश्यकता

- पिछले कई वर्षों से खेती में काफी नुकसान देखने को मिल रहा है। इसका मुख्य कारण हानिकारक कीटनाशकों का उपयोग है। इसमें लागत भी बढ़ रही है।
- भूमि के प्राकृतिक स्वरूप में भी बदलाव हो रहे है जो काफी नुकसान भरे हो सकते हैं। रासायनिक खेती से प्रकृति में और मनुष्य के स्वास्थ्य में काफी गिरावट आई है।
- किसानों की पैदावार का आधा हिस्सा उनके उर्वरक और कीटनाशक में ही चला जाता है। यदि किसान खेती में अधिक मुनाफा या फायदा कमाना चाहता है तो उसे प्राकृतिक खेती की तरफ अग्रसर होना चाहिए।
- खेती में खाने पीने की चीजे काफी उगाई जाती है जिसे हम उपयोग में लेते है। इन खाद्य पदार्थों में जिंक और आयरन जैसे कई सारे खनिज तत्व उपस्थित होते है जो हमारे स्वास्थ्य के लिए काफी लाभदायक होती है।
- रासायनिक खाद और कीटनाशक के उपयोग से ये खाद्य पदार्थ अपनी गुणवत्ता खो देते है। जिससे हमारे शरीर पर बुरा असर पड़ता है।
- रासायनिक खाद और कीटनाशक के उपयोग से जमीन की उर्वरक क्षमता खो रही है। यह भूमि के लिए बहुत ही हानिकारक है और इससे तैयार खाद्य पदार्थ मनुष्य और जानवरों की सेहत पर बुरा असर डाल रहे है।
- रासायनिक खाद और कीटनाशक के उपयोग से मिट्टी की उर्वरक क्षमता काफी कम हो गई। जिससे मिट्टी के पोषक तत्वों का संतुलन बिगड़ गया है। इस घटती मिट्टी की उर्वरक क्षमता को देखते हुए जैविक खाद उपयोग जरूरी हो गया है।

प्राकृतिक खेती के लाभ

- इस तकनीक के इस्तेमाल से किसानों को किसी भी प्रकार के रसायन और कीटनाशक तथा बीजों को खरीदने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इस प्रकार की खेती में किसान रासायनिक खादों और कीटनाशकों के स्थान पर अपने घर पर बनाई गई चीजों का प्रयोग करते हैं।
- इससे खेती करने के दौरान लागत कम आती है। प्राकृतिक खेती से मिट्टी में उपस्थित जैवविविधता का विकास होता है और मिट्टी की उर्वरता शक्ति बढ़ती है तथा फसलों की पैदावार अच्छी होती है।
- उपज की अच्छी गुणवत्ता होने के कारण उसके दाम भी बाजार में अच्छे मिलेंगे।
- जलवायु परिवर्तन के कारण फसलों को होने वाले नुकसान के प्रभावों को भी कम करती है।
- पौधों को पानी की कम जरूरत होती है तथा भूमि की उर्वरा शक्ति के साथ-साथ मृदा के भौतिक रसायनिक एवं जैविक गुणवत्ता भी बढ़ जाती है।
- वातावरण के सभी कारकों एवं जीवों के साथ तालमेल बना कर पारिस्थितिकी तंत्र को व्यवस्थित रखता है।

प्राकृतिक खेती के अवयव:

बीजामृत- बीजामृत एक प्राचीन, टिकाऊ कृषि तकनीक है। इसका उपयोग बीज, पौध या किसी रोपण सामग्री के लिए किया जाता है। यह नई जड़ों को फंगस से बचाने में कारगर है। बीजामृत एक किण्वित माइक्रोबियल समाधान है, जिसमें पौधों के लिए बहुत से लाभकारी माइक्रोब्स होते हैं, और इसे बीज उपचार के रूप में अनुप्रयोग किया जाता है।

जीवामृत- जीवामृत मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को बढ़ावा देकर उत्प्रेरक के रूप में कार्य करता है और प्रासंगिक पोषक तत्व भी प्रदान करता है। यह जैविक कार्बन और अन्य पोषक तत्वों का भी स्रोत है, किंतु इनकी मात्रा कम ही होती है। यह माइक्रोबियल गतिविधि के लिए एक प्राइमर की तरह काम करता है, और देशी केंचुओं की संख्या को भी बढ़ाता है।

मल्चिंग- मल्चिंग को जीवित फसलों और पुआल (मृत पौधा बायोमास) दोनों का उपयोग करके मिट्टी की सतह को कवर करने के रूप में परिभाषित किया जाता है ताकि नमी को संरक्षित किया जा सके, पौधों की जड़ों के आसपास मिट्टी का तापमान कम हो, मिट्टी का कटाव रोका जा सके और खरपतवार की वृद्धि को कम किया जा सके । मिट्टी में वायु परिसंचरण को बढ़ाने, वर्षा जल के सतही प्रवाह को कम करने और खरपतवारों के विकास को नियंत्रित करने के लिए मल्चिंग की जाती है।

व्हापासा- व्हापासा का अर्थ है मिट्टी के दो कणों के बीच की गुहा में 50% वायु और 50% जलवाष्प का मिश्रण। यह मिट्टी का माइक्रोक्लाइमेट है जिस पर मिट्टी के जीव और जड़ें अपनी अधिकांश नमी और अपने कुछ पोषक तत्वों के लिए निर्भर करती हैं। यह पानी की उपलब्धता को बढ़ाता है, पानी के उपयोग की दक्षता को बढ़ाता है और सूखे के विरूद्ध प्रतिरोधी बनाता है।

नीमास्त्र- नीमास्त्र का उपयोग रोगों की रोकथाम या निवारण के लिए किया जाता है, और पौधों को खाने और चूसने वाले कीड़ों या लार्वा को मारने के लिए किया जाता है। यह हानिकारक कीड़ों के प्रजनन को नियंत्रित करने में भी मदद करता है। नीमास्त्र तैयार करना बहुत आसान है और प्राकृतिक खेती के लिए यह सबसे अच्छा कीटनाशक है।

ब्रह्मस्त्र- यह पत्तियों से तैयार किया जाने वाला एक प्राकृतिक कीटनाशक है जिसमें कीटों को हटाने के लिए विशिष्ट क्षाराभ (एल्कालॉएड्स) होते हैं। यह फली और फलों में मौजूद सभी शोषक कीटों और छिपे हुए कीड़ों को नियंत्रित करता है।

अग्नेयास्त्र- इसका उपयोग सभी शोषक कीटों और कीड़ों को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है ।

दशपर्णी अर्क- दशपर्णी अर्क को नीमास्त्र, ब्रह्मास्त्र और अग्नेयास्त्र के विकल्प के रूप में कार्य करता है। इसका उपयोग सभी प्रकार के कीटों को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है और कीटों के आक्रमण के स्तर के आधार पर उपयोग किया जाता है ।

कवकनाशी- गाय के दूध और दही से तैयार किया गया कवकनाशी, कवक को नियंत्रित करने में बहुत प्रभावी पाया गया है। (स्रोत : कम लागत प्राकृतिक कृषि)

प्राकृतिक खेती में मृदा पोषण हेतु जीवामृत

प्राकृतिक खेती में मृदा पोषण के लिए उपयोग किए जाने वाले प्रमुख आदानों में जीवामृत एक महत्वपूर्ण जैविक घोल के रूप में स्थापित हुआ है। यह पारंपरिक ज्ञान एवं प्रयोगात्मक अनुभवों के आधार पर विकसित एक ऐसी तकनीक है, जिसका उद्देश्य मृदा में सूक्ष्मजीवों की सक्रियता को बढ़ाकर पोषक तत्वों की उपलब्धता को सुदृढ़ करना है। जीवामृत का निर्माण सामान्यतः गोबर, गोमूत्र, गुड़ तथा दालों के आटे (या बेसन) जैसे सुलभ जैविक पदार्थों के संयोजन से किया जाता है। प्रायः एक एकड़ भूमि के लिए सीमित मात्रा में गोबर के साथ उपरोक्त घटकों को मिलाकर घोल तैयार किया जाता है, जिसे मृदा या फसल पर प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार तैयार किया गया जीवामृत एक जैविक उत्प्रेरक (bio-catalyst) के रूप में कार्य करता है।

वैज्ञानिक दृष्टि से जीवामृत का प्रमुख कार्य मृदा में सूक्ष्मजीवों की संख्या एवं उनकी क्रियाशीलता को बढ़ाना है। यह मृदा में उपलब्ध

पोषक तत्वों को घुलनशील एवं पौधों के लिए सुलभ रूप में परिवर्तित करने में सहायक होता है। यद्यपि जीवामृत स्वयं प्रमुख पोषक तत्वों का समृद्ध स्रोत नहीं है, फिर भी यह जैविक कार्बन एवं कुछ आवश्यक पोषक तत्वों की सीमित मात्रा प्रदान करता है, जिससे मृदा की उर्वरता में सहायक प्रभाव पड़ता है। इसके अतिरिक्त, जीवामृत मृदा जैविकी को सक्रिय करने में "प्राइमर" के रूप में कार्य करता है, जिससे लाभकारी सूक्ष्मजीवों की वृद्धि होती है और पोषक तत्वों का प्राकृतिक चक्रण सुदृढ़ होता है। यह मृदा में देशी केंचुओं की संख्या बढ़ाने में भी सहायक माना जाता है, जो मृदा की संरचना, वायुसंचार एवं जल धारण क्षमता को सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

जीवामृत का निर्माण

प्राकृतिक खेती में जीवामृत एक महत्वपूर्ण जैविक घोल है, जिसका निर्माण स्थानीय एवं सुलभ संसाधनों के उपयोग से किया जाता है। सामान्यतः एक एकड़ भूमि के लिए निम्नलिखित सामग्री का उपयोग किया जाता है:

देशी गाय का गोबर (लगभग 10 किलोग्राम), देशी गाय का मूत्र (8–10 लीटर), गुड़ (1–2 किलोग्राम), दाल का आटा या बेसन (1–2 किलोग्राम), पानी (लगभग 180 लीटर) तथा किसी पेड़ के नीचे की मिट्टी (लगभग 1 किलोग्राम)। इन सभी सामग्रियों को एक प्लास्टिक ड्रम में डालकर लकड़ी के डंडे से अच्छी तरह मिलाया जाता है। इसके पश्चात इस घोल को छाया में 2–3 दिनों के लिए रखा जाता है ताकि इसमें सूक्ष्मजीवों की वृद्धि एवं किण्वन (fermentation) की प्रक्रिया विकसित हो सके। इस अवधि के दौरान प्रतिदिन प्रातः एवं सायं घड़ी की दिशा में लगभग 2 मिनट तक घोल को चलाना आवश्यक होता है तथा ड्रम को बोरे या कपड़े से ढककर रखा जाता है। किण्वन प्रक्रिया के दौरान अमोनिया, कार्बन डाइऑक्साइड एवं मीथेन जैसी गैसों का निर्माण होता है, जो जैव-रासायनिक सक्रियता का संकेत हैं। तैयार जीवामृत सूक्ष्मजीवों से समृद्ध होता है और मृदा में जैविक क्रियाओं को सक्रिय करने के लिए उपयोगी माना जाता है।

उपयोग अवधि एवं भंडारण

तैयार जीवामृत का उपयोग सीमित समयावधि के भीतर करना उपयुक्त माना जाता है। ग्रीष्म ऋतु में इसे लगभग 7 दिनों के भीतर तथा शीत ऋतु में 8–15 दिनों तक उपयोग किया जा सकता है। इसके बाद इसकी सक्रियता घटने लगती है, अतः शेष घोल को मृदा में डाल देना अधिक उपयुक्त होता है।

जीवामृत का भूमि में प्रयोग (Soil Application)

जीवामृत का प्रयोग सामान्यतः सिंचाई जल के साथ किया जाता है, जिससे यह सीधे मृदा में पहुँचकर सूक्ष्मजीवों की संख्या एवं सक्रियता को बढ़ाता है। प्रति एकड़ लगभग 200 लीटर जीवामृत को महीने में एक या दो बार सिंचाई के साथ देने की सिफारिश की जाती है।

फलदार वृक्षों के लिए इसका प्रयोग वृक्ष की छाया क्षेत्र (विशेषकर दोपहर के समय की छाया) के आसपास 2 से 5 लीटर प्रति वृक्ष की दर से गोलाकार विधि में किया जाता है। यह आवश्यक है कि जीवामृत डालते समय मृदा में पर्याप्त नमी हो, ताकि सूक्ष्मजीव सक्रिय रूप से कार्य कर सकें।

फसलों पर जीवामृत का छिड़काव (Foliar Application)

जीवामृत का उपयोग विभिन्न फसलों—जैसे गन्ना, केला, गेहूँ, ज्वार, मक्का, दलहनी फसलें, तिलहनी फसलें, सब्जियाँ, मसाले एवं औषधीय पौधों—पर पर्णीय छिड़काव के रूप में भी किया जाता है। सामान्यतः महीने में 1–3 बार छिड़काव किया जा सकता है, जो फसल की अवस्था एवं आवश्यकता पर निर्भर करता है।

खड़ी फसलों में छिड़काव अनुसूची (Crop-wise Spray Schedule)

(i) 60–90 दिन अवधि की फसलें

इस श्रेणी की फसलों में बुआई के लगभग 21 दिन बाद प्रथम छिड़काव किया जाता है, जिसमें 100 लीटर पानी में 5 लीटर छाना हुआ जीवामृत मिलाया जाता है। इसके पश्चात 21 दिन के अंतराल पर दूसरा छिड़काव किया जाता है, जिसमें 200 लीटर पानी के साथ लगभग 20 लीटर जीवामृत का उपयोग किया जाता है। तीसरे चरण में पुनः 21 दिन बाद 200 लीटर पानी में 5 लीटर खट्टी छाछ या मट्ठा मिलाकर छिड़काव किया जाता है, जो पौधों की वृद्धि को संतुलित करता है।

(ii) 90–120 दिन अवधि की फसलें

इस श्रेणी में प्रथम छिड़काव 21 दिन बाद 100 लीटर पानी में 5 लीटर जीवामृत मिलाकर किया जाता है। दूसरा छिड़काव 21 दिन के अंतराल पर 150 लीटर पानी में 10 लीटर जीवामृत के साथ किया जाता है। तीसरा छिड़काव 200 लीटर पानी में 20 लीटर जीवामृत के साथ किया जाता है। अंतिम अवस्था (दाना या फल बनने के समय) में 200 लीटर पानी में 5 लीटर खट्टी छाछ या 2 लीटर नारियल पानी का उपयोग किया जाता है।

(iii) 120–135 दिन अवधि की फसलें

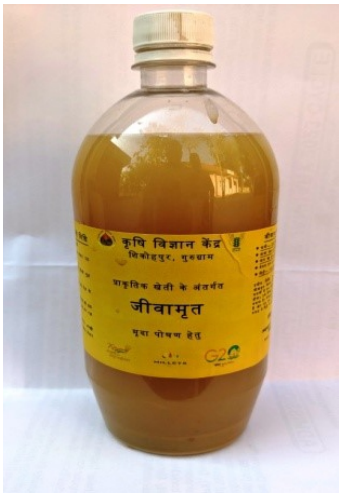

इन फसलों में प्रथम छिड़काव बुआई के लगभग एक माह बाद 200 लीटर पानी में 5 लीटर जीवामृत के साथ किया जाता है। इसके बाद 21 दिन के अंतराल पर 150 लीटर पानी में 10 लीटर जीवामृत तथा तीसरे चरण में 200 लीटर पानी में 5 लीटर खट्टी छाछ का छिड़काव किया जाता है। इसके पश्चात 200 लीटर पानी में 20 लीटर जीवामृत तथा अंतिम अवस्था में छाछ या नारियल पानी का प्रयोग किया जाता है।

(iv) 165–180 दिन अवधि की फसलें

लंबी अवधि की फसलों में छिड़काव की संख्या अधिक होती है। प्रारंभिक छिड़काव एक माह बाद 150 लीटर पानी में 5 लीटर जीवामृत के साथ किया जाता है। इसके बाद क्रमशः 21 दिन के अंतराल पर 10 लीटर, 20 लीटर जीवामृत एवं खट्टी छाछ या मट्ठा मिलाकर छिड़काव किया जाता है। अंतिम चरणों में दाने या फल की अवस्था के अनुसार छाछ या नारियल पानी का प्रयोग किया जाता है। (स्रोत : कम लागत प्राकृतिक कृषि)

प्राकृतिक खेती में जैविक कीट एवं रोग नियंत्रण उपाय

नीमास्त्र: जैव-कीटनाशक के रूप में उपयोगिता एवं वैज्ञानिक आधार

नीमास्त्र प्राकृतिक खेती में उपयोग किया जाने वाला एक प्रभावी जैव-कीटनाशक घोल है, जो मुख्यतः रस चूसने वाले कीटों (जैसे एफिड, जेसिड, व्हाइटफ्लाई) तथा प्रारंभिक अवस्था की सुंडियों के नियंत्रण में उपयोगी सिद्ध होता है। इसका प्रमुख सक्रिय घटक नीम (Azadirachta indica) में उपस्थित अजाडिरैक्टिन (Azadirachtin) है, जो कीटों की वृद्धि, प्रजनन तथा भोजन व्यवहार को बाधित करता है। इसके निर्माण के लिए नीम की पत्तियों या फलों को कूटकर पानी, गोमूत्र और गोबर के साथ मिलाया जाता है। इस मिश्रण को 48 घंटे तक किण्वित किया जाता है, जिससे इसमें सूक्ष्मजीव सक्रिय हो जाते हैं और जैव-रासायनिक यौगिकों का निर्माण होता है। यह घोल कीटों के तंत्रिका तंत्र एवं हार्मोनल संतुलन को प्रभावित करता है, जिससे उनका जीवन चक्र बाधित होता है। नीमास्त्र का एक महत्वपूर्ण गुण यह है कि यह लक्षित कीटों पर प्रभावी होते हुए भी लाभकारी कीटों (जैसे परभक्षी एवं परजीवी कीट) को अपेक्षाकृत कम प्रभावित करता है, जिससे खेत की जैव विविधता सुरक्षित रहती है।

ब्रह्मास्त्र: बहु-वनस्पति आधारित शक्तिशाली कीटनाशक

ब्रह्मास्त्र एक उन्नत जैविक कीटनाशक है, जिसमें विभिन्न औषधीय पौधों जैसे नीम, करंज, धतूरा एवं सीताफल का समन्वित उपयोग किया जाता है। इन पौधों में उपस्थित द्वितीयक चयापचयी यौगिक (secondary metabolites), जैसे एल्कलॉइड, टरपीन और फ्लेवोनॉयड, कीटों के लिए विषैले या प्रतिरोधक होते हैं। गोमूत्र में इन पौधों को उबालने से सक्रिय घटकों का निष्कर्षण अधिक प्रभावी रूप से होता है। यह घोल कीटों के पाचन तंत्र, तंत्रिका तंत्र तथा वृद्धि हार्मोन को प्रभावित करता है, जिससे उनकी मृत्यु या विकास अवरोध होता है। ब्रह्मास्त्र विशेष रूप से उन कीटों के लिए प्रभावी है, जो बड़ी सुंडियों या इल्लियों के रूप में फसलों को गंभीर क्षति पहुँचाते हैं। इसका उपयोग फसल सुरक्षा के एक सशक्त जैविक विकल्प के रूप में किया जा सकता है।

अग्न्यास्त्र: तीव्र प्रभाव वाला कीटनाशक घोल

अग्न्यास्त्र एक तीव्र क्रियाशील जैविक घोल है, जिसमें मिर्च, लहसुन एवं नीम जैसे घटकों का उपयोग किया जाता है। मिर्च में उपस्थित कैप्सेसिन तथा लहसुन में उपस्थित एलिसिन जैसे यौगिक कीटों के लिए अत्यधिक प्रतिकूल होते हैं। यह घोल विशेष रूप से तनों, फलों एवं फलियों के अंदर रहने वाले कीटों के नियंत्रण में प्रभावी है। इसका प्रभाव कीटों की श्वसन एवं तंत्रिका क्रियाओं पर पड़ता है, जिससे वे शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। अग्न्यास्त्र का उपयोग उन परिस्थितियों में किया जाता है, जहाँ कीटों का प्रकोप अधिक हो और त्वरित नियंत्रण आवश्यक हो।

दशपर्णी अर्क: समेकित जैविक कीट नियंत्रण प्रणाली

दशपर्णी अर्क प्राकृतिक खेती में एक समग्र जैविक कीटनाशक के रूप में जाना जाता है, जिसमें विभिन्न औषधीय पौधों की पत्तियों का संयोजन किया जाता है। इसमें सामान्यतः दस प्रकार की वनस्पतियों का उपयोग किया जाता है, जिनमें नीम, करंज, धतूरा, बेल, अरंडी आदि शामिल हैं। इस घोल का निर्माण दीर्घकालीन किण्वन प्रक्रिया (लगभग 30–40 दिन) के माध्यम से किया जाता है, जिससे इसमें विभिन्न जैव सक्रिय यौगिकों का निर्माण होता है। इसमें तंबाकू, सोंठ एवं हल्दी जैसे घटकों का समावेश इसकी प्रभावशीलता को और बढ़ाता है। दशपर्णी अर्क की विशेषता यह है कि यह विभिन्न प्रकार के कीटों—रस चूसने वाले, चबाने वाले तथा इल्लियों सभी पर प्रभावी होता है। यह एक बहुउद्देश्यीय एवं दीर्घकालिक उपयोग के लिए उपयुक्त जैविक कीटनाशक है।

प्राकृतिक फफूंदनाशक: जैविक रोग नियंत्रण का सरल उपाय

प्राकृतिक खेती में फफूंदजनित रोगों के नियंत्रण के लिए खट्टी छाछ या लस्सी का उपयोग किया जाता है। इसमें उपस्थित लाभकारी सूक्ष्मजीव, विशेषकर लैक्टिक अम्ल बैक्टीरिया, रोगजनक कवकों के विकास को रोकते हैं। यह घोल न केवल फफूंदनाशक के रूप में कार्य करता है, बल्कि मृदा एवं पत्तियों पर सूक्ष्मजीव संतुलन को भी बनाए रखता है। इसके अतिरिक्त, यह पौधों की प्रतिरोधक क्षमता (immunity) को बढ़ाने में भी सहायक होता है।

जैविक कीटनाशकों की विशेषताएँ एवं सीमाएँ (Critical Perspective)

इन सभी जैविक घोलों की एक प्रमुख विशेषता यह है कि ये स्थानीय संसाधनों पर आधारित, कम लागत वाले तथा पर्यावरण के अनुकूल होते हैं। ये मृदा, जल एवं जैव विविधता पर न्यूनतम प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं और दीर्घकालिक कृषि स्थिरता को बढ़ावा देते हैं। हालाँकि, इनकी प्रभावशीलता कई बार मौसम, कीट प्रकोप की तीव्रता तथा तैयारी की विधि पर निर्भर करती है। अतः इनके उपयोग में निरंतरता, सही समय और उचित सांद्रता का विशेष महत्व होता है।

उच्च आय और पर्यावरणीय स्थिरता के लिए फसल विविधीकरण

सुभाष बाबू, कपिला शेखावत, संजय सिंह राठौर एवं ऋषभ सिंह
सस्य विज्ञान संभाग

फसल विविधीकरण टिकाऊ कृषि के लिए एक रणनीतिक दृष्टिकोण है जो पर्यावरणीय स्वास्थ्य को संरक्षित करते हुए कृषि आय को बढ़ाता है। इसमें एक ही फसल पर निर्भर रहने के बजाय विभिन्न प्रकार की फसलें उगाना शामिल हैं। यह जल–उपयोग दक्षता में सुधार कर सूखा और बाढ़ जैसी मौसम की घटनाओं से जुड़े जोखिमों को कम करके जलवायु लचीलापन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विभिन्न फसलों की जड़ संरचनाएं अलग–अलग होती हैं, जो मिट्टी की संरचना को बढ़ाती हैं, कटाव को कम करती हैं और जल धारण को अनुकूलित करती हैं। उदाहरण के लिए, दलहनी फसलें वायुमंडलीय नाइट्रोजन को ठीक करती हैं, रसायनिक उर्वरकों की आवश्यकता को कम करती हैं और मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करती हैं। आर्थिक दृष्टिकोण से, फसल विविधीकरण कई फसलों को शामिल कर किसानों की आय को स्थिर करने में मदद करता है। इसके अतिरिक्त, यह दालों, तिलहनों और सब्जियों जैसे पौष्टिक भोजन की उपलब्धता बढ़ाकर आहार विविधता को बढ़ावा देता है। अनाज, दलहन, तिलहन और बागवानी फसलों को एकीकृत करके, किसान उत्पादकता में सुधार कर सकते हैं, जैव विविधता बढ़ा सकते हैं और अधिक टिकाऊ और जलवायु–स्मार्ट कृषि प्रणाली बना सकते हैं, जो अंततः दीर्घकालिक खाद्य सुरक्षा और पर्यावरणीय स्वास्थ्य में योगदान कर सकती है।

फसल विविधीकरण का महत्व

आर्थिक लाभ

- ❖ किसानों के लिए कई राजस्व स्रोत प्रदान करता है।
- ❖ वित्तीय जोखिमों को कम करते हुए, एक ही फसल पर निर्भरता कम करता है।
- ❖ कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ाता है।
- ❖ मक्का + लोबिया–सरसों प्रणालियों में मक्का–सरसों की तुलना में लगभग 20 प्रतिशत अधिक लाभ प्राप्त होता है।

पर्यावरणीय लाभ

- ❖ पोषक तत्वों की कमी को कम करके और कार्बनिक पदार्थ को बढ़ाकर मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार करता है।
- ❖ फसल चक्र और अंतरफसल के माध्यम से कीटों और बीमारियों के प्रकोप को कम करता है।
- ❖ रासायनिक आदान (इनपुट) निर्भरता को कम करता हैं, जैविक कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देता है।
- ❖ जैव विविधता को बढ़ाता है, जो परागण और प्राकृतिक कीट नियंत्रण का समर्थन करता है।
- ❖ अरहर–गेहूं प्रणाली में मक्का–सरसों की तुलना में लगभग 39.5 प्रतिशत कम ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन दर्ज किया गया है।

जलवायु अनुकूलन

- ❖ सूखे और बाढ़ प्रतिरोधी फसलों को एकीकृत करके किसानों को बदलती जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल बनने में मदद मिलती है।

- ❖ कार्बन पृथक्करण को बढ़ावा देता है और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करता है।
- ❖ मक्का + लोबिया + सोयाबीन – गेहूं + मसूर में मक्का – गेहूं की तुलना में अधिक कार्बन अनुकूलन
- ❖ सूचकांक और कम कार्बन संवेदनशीलता होती है।

मृदा स्वास्थ्य लाभ

- ❖ विभिन्न फसलों की पोषक तत्वों की आवश्यकताएं और पुनः पूर्ति क्षमताएं अलग–अलग होती हैं, जिससे मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी कम होती है और उर्वरता में सुधार होता है।
- ❖ विभिन्न फसलों की जड़ प्रणाली मिट्टी के एकत्रीकरण को बढ़ाती है, संघनन को कम करती है और सरंध्रता को बढ़ाती है।
- ❖ फसल के अवशेष और जड़ के अवशेष कार्बनिक पदार्थ की मात्रा को बढ़ाते हैं, सूक्ष्मजीवीय (माइक्रोबियल) गतिविधि और पोषक तत्व चक्र को बढ़ाते हैं।
- ❖ विविध फसल चक्र बेहतर भूमि आवरण प्रदान करते हैं, हवा और पानी के क्षरण के कारण मिट्टी के नुकसान को कम करते हैं।
- ❖ अनाज–दलहन एकीकरण से मिट्टी में कार्बनिक कार्बन अवशोषण मक्का–गेहूं की तुलना में लगभग 2 गुना बढ़ जाता है।

फसल विविधीकरण विकल्प

1. अंतरफसल

- ❖ स्थान और संसाधन का अधिकतम उपयोग करने के लिए दो या दो से अधिक फसलें एक साथ उगाना।
- ❖ मक्का + लोबिया + सोयाबीन–गेहूं + सरसों और मक्का + लोबिया + सोयाबीन–गेहूं + मसूर में मक्का–गेहूं प्रणाली की तुलना में 90.7 प्रतिशत अधिक पर्यावरण दक्षता सूचकांक पाया गया है।
- ❖ कूंड और मेड़ विधि में मक्का + लोबिया + सोयाबीन – गेहूं + मसूर/सरसों में कूंड और मेड़ पर मक्का–गेहूं की तुलना में लगभग 57.33 प्रतिशत कम जल पदचिह्न है।

2. फसल चक्र

- ❖ कीट और रोग चक्र को तोड़ने और मिट्टी की संरचना में सुधार करने के लिए क्रमिक रूप से विभिन्न फसलें लगाना।
- ❖ अनाज–दलहन एकीकरण प्रणाली की उत्पादकता मक्का–गेहूं प्रणाली की तुलना में 2–2.5 गुना बढ़ जाती है।
- ❖ मक्का–गेहूं प्रणाली की तुलना में अनाज– दलहन परस्पर क्रिया कार्बन पदचिह्न को 2.5–3 गुना कम कर देती है

3. एकीकृत कृषि वानिकी

- ❖ मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने और वानिकी, फसलों और औषधीय पौधों से अतिरिक्त आय प्राप्त करने के लिए पेड़ों को फसलों के साथ एकीकृत करना।
- ❖ अल्पावधि दलहन और तिलहन फसलों के साथ फलों के पेड़ों का एकीकरण असंख्य लाभ प्रदान करता है और अर्धशुष्क क्षेत्रों में ग्रामीण आबादी की खाद्य और आजीविका सुरक्षा से समझौता किए बिना मिट्टी में कार्बन को बहाल करने के लिए एक कुशल प्रणाली प्रदान करता है।
- ❖ मूंग–आलू प्रणाली के साथ फालसा के एकीकरण ने उच्चतम फसल प्रणाली उत्पादकता (25.9 टन/हेक्टेयर) दर्ज की, इसके बाद फालसा–लोबिया–सरसों प्रणाली का स्थान रहा।
- ❖ करोंदा+मूंग–आलू प्रणाली ने अधिकतम शुद्ध आय (282320 रुपये/हेक्टेयर), और जल उपयोग दक्षता (33.0 किलोग्राम/हेक्टेयर–मिमी) दर्ज की गई।
- ❖ फालसा–आधारित एकीकृत कृषि वानिकी प्रणाली में उच्चतम कार्बन पृथक्करण क्षमता (0.6–0.67 मिलीग्राम/हेक्टेयर/वर्ष) और सबसे कम कार्बन पदचिह्न प्राप्त हुआ है।

4. बागवानी एकीकरण

आय बढ़ाने और आहार विविधता में सुधार के लिए फसल प्रणाली में सब्जियों, फलों और औषधीय पौधों को शामिल करना। उदाहरणः आम–दलहन, पपीता– दलहन है।

5. पशुधन एकीकरण

मिट्टी की उर्वरता के लिए खेत के अवशेषों को चारे और खाद के रूप में उपयोग करने के लिए फसल उत्पादन को पशुपालन के साथ जोड़ना। उदाहरणः चारा फसलों के साथ पशुधन उत्पादन, धान के खेतों में मछली पालन, फसल+पशुधन+मछली पालन।

फसल विविधीकरण को अपनाने की रणनीतियाँ

- ❖ सफल विविधीकरण सुनिश्चित करने के लिए मिट्टी के प्रकार, जलवायु और पानी की उपलब्धता के आधार पर उपयुक्त फसलों की पहचान करें।
- ❖ मिट्टी की उर्वरता और लाभप्रदता बढ़ाने के लिए मौजूदा फसल प्रणालियों में नत्रजन–स्थिर करने वाली दलहनी फसलें (जैसे, दालें, सोयाबीन) और तिलहन शामिल करें।
- ❖ अनाज को दलहन, तिलहन और सब्जियों के साथ बदलें या संसाधन उपयोग में सुधार और कीट जोखिम को कम करने के लिए अंतरफसल तकनीकों का उपयोग करें।
- ❖ बेहतर भूमि उपयोग दक्षता और विविध आय के लिए मौसमी फसलों के साथ वृक्ष–आधारित प्रणालियों को मिलाएं।
- ❖ जलवायु परिवर्तनशीलता के अनुकूल सूखा–सहिष्णु, बाढ़–प्रतिरोधी और कम अवधि वाली फसलों को बढ़ावा दें।
- ❖ लाभप्रदता सुनिश्चित करने और बाजार जोखिमों को कम करने के लिए स्थिर मांग और प्रसंस्करण के अवसरों वाली फसलों का चयन करें।
- ❖ फसल विविधिकरण फसल को अनुकूलित करने के लिए ड्रिप सिंचाई, सटीक पोषक तत्व प्रबंधन और मशीनीकरण जैसी आधुनिक तकनीकों का उपयोग करें।
- ❖ लाभप्रदता बढ़ाने और फसल के बाद के नुकसान को कम करने के लिए विविध फसलों के प्रसंस्करण, भंडारण और विपणन के लिए बुनियादी ढांचे का विकास करना।

निष्कर्ष

उच्च कृषि आय और पर्यावरणीय स्थिरता प्राप्त करने के लिए फसल विविधीकरण आवश्यक है। यह मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ाता है, जोखिमों को कम करता है और खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करता है। अर्ध–शुष्क क्षेत्रों के तहत न्यूनतम पर्यावरणीय प्रभाव के साथ उच्च लाभप्रदता प्राप्त करने के लिए दलहन आधारित प्रणाली एक टिकाऊ उत्पादन मॉडल है। विविध फसल प्रणालियों को अपनाने से जलवायु परिवर्तन के प्रति लचीलेपन में सुधार हो सकता है, रासायनिक आदानों पर निर्भरता कम हो सकती है और दीर्घकालिक कृषि स्थिरता बन सकती है। अधिक अनुकूल और समृद्ध कृषि भविष्य के लिए नीति निर्माताओं और किसानों को विविध कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देने के लिए सहयोग करना चाहिए।

पूसा संस्थान द्वारा विकसित धान की उन्नत प्रजातियाँ

गोपाल कृष्णन एस., पी.के. भौमिक, के.के. विनोद, हरिता बी., आर.के. एल्लूर एवं आर.सेठ
आनुवंशिकी संभाग

पूसा संस्थान के नाम से प्रसिद्ध भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (भा.कृ.अ.सं.) अनुसंधान, शिक्षा एवं प्रसार के क्षेत्र में भारतीय कृषि अनुसंधान परिशद के अर्न्तगत कार्यरत देश का एक अग्रणी संस्थान है। इसे हरित क्रांति की जन्मस्थली के नाम से भी जाना जाता है। इस संस्थान का आनुवंशकी संभाग फसलों की उच्च उपज देने वाली उन्नत किस्मों के विकास के लिए देश भर में जाना जाता है। ये किस्में देश की 'खाद्य एवं पोषण सुरक्षा' में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं तथा किसानों की आय बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुई है। भा.कृ.अ.सं. द्वारा विकसित फसलों की उन्नत किस्मों के बीज की मांग किसानों में इस संस्थान की लोकप्रियता का प्रमाण है। वर्ष 2014–24 के दौरान भा.कृ.अ.सं. ने विभिन्न 6 खरीफ फसलों में कुल 54 किस्मों और संकर प्रजातियों का विकास किया है। उच्च उपज के अलावा ये नवीन किस्में, बीमारियों एवं कीटों के लिए प्रतिरोधक, कम नमी तथा उच्च तापमान के प्रति सहनषील एवं उच्च गुणवत्ता वाली हैं। संस्थान द्वारा धान की उन्नत किस्मों का विवरण निम्नलिखित हैः

1. **पूसा बासमती 1: क्षेत्रः** पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, उत्तरप्रदेश, उत्तराखण्ड एवं जम्मू एवं कश्मीर, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 50.0 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 135 दिन **मुख्य विशेषताएंः** अर्द्ध बौनी एवं अत्यधिक उपज वाली बासमती चावल की किस्म।

2. **पूसा बासमती 1121: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली एवं पंजाब, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 50.0 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 140 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** अधिक लम्बे सुडौल दाने, पकने के उपरान्त चार गुना आयतन विस्तार एवं 20–25 मि.मी. लम्बाई।

3. **पूसा बासमती 6: क्षेत्रः** पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड एवं जम्मू और कश्मीर **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 55.0 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 150 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** तीव्र खुशबू, मज़बूत तना एवं कम सफ़ेद दाने (<4%) युक्त अर्द्ध बौनी बासमती चावल की किस्म।

4. **पूसा बासमती 1509: क्षेत्रः** पश्चिमी उत्तर प्रदेश, दिल्ली **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 60.0 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 120 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** अर्द्ध बौनी, अधिक लम्बे एवं सुडौल दाने युक्त शीघ्र पकने वाली बासमती चावल की किस्म।

5. **पूसा बासमती 1637: क्षेत्रः** पश्चिमी उत्तर प्रदेश, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली उत्तराखण्ड, हरियाणा एवं पंजाब, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 42.0 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 130 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** पूसा बासमती 1 की ब्लास्ट रोग प्रतिरोधी उन्नत किस्म।

6. **पूसा बासमती 1728: क्षेत्रः** पंजाब, हरियाणा, दिल्ली एवं जम्मू और कश्मीर, उत्तराखण्ड, एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 41.8 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 140 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** पूसा बासमती 6 की बैक्टिरियल ब्लाइट प्रतिरोधी उन्नत किस्म।

7. **पूसा बासमती 1718: क्षेत्रः** पंजाब, हरियाणा, दिल्ली एवं जम्मू और कश्मीर, उत्तराखण्ड, एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 46.4 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 135 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** पूसा बासमती 1121 की बैक्टिरियल ब्लाइट प्रतिरोधी उन्नत किस्म।

8. **पूसा बासमती 1692: क्षेत्रः** हरियाणा, दिल्ली एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 52.6 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 115 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** अर्द्ध बौनी, शीघ्र पकने एवं अत्यधिक उपज वाली बासमती चावल की किस्म।

9. **पूसा बासमती 1847: क्षेत्रः** दिल्ली, पंजाब एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 57.1 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 120 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** पूसा बासमती 1509 की बैक्टिरियल ब्लाइट एवं ब्लास्ट प्रतिरोधी उन्नत किस्म।

10. **पूसा बासमती 1885: क्षेत्रः** दिल्ली, हरियाणा एवं पंजाब, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 46.8 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 135 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** पूसा बासमती 1121 की बैक्टिरियल ब्लाइट एवं ब्लास्ट प्रतिरोधी उन्नत किस्म।

11. **पूसा बासमती 1886: क्षेत्रः** हरियाणा एवं उत्तराखण्ड, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 44.9 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 145 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** पूसा बासमती 6 की बैक्टिरियल ब्लाइट एवं ब्लास्ट प्रतिरोधी उन्नत किस्म।

12. **पूसा बासमती 1979: क्षेत्रः** दिल्ली, हरियाणा एवं पंजाब, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 45.8 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 133 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** पूसा बासमती 1121 की खरपतवारनाशी सहिष्णु उन्नत किस्म।

13. **पूसा बासमती 1985: क्षेत्रः** दिल्ली, पंजाब एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 51.6 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 115 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** पूसा बासमती 1509 की खरपतवारनाशी सहिष्णु उन्नत किस्म।

14. **पूसा बासमती 1882: क्षेत्रः** पश्चिमी उत्तर प्रदेश, उत्तराखंडए दिल्ली, हरियाणा एवं पंजाब **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 46.9 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 134 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** पूसा बासमती 1 की सूखा सहनशहील उन्नत किस्म।

15. **पूसा 2090: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 88.4 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 120 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** तना काफी मजबूत और सख्त होता है, जिससे फसल गिरने की संभावना कम होती है ।

16. **पूसा 1824: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 95.1 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 120 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** जल्दी पकने वाला गैर.बासमती चावल।

पूसा संस्थान द्वारा विकसित खरीफ फसलों की उन्नत प्रजातियाँ
बाजरा, अरहर, मूँग एवं सोयाबीन

बाजराः एस.पी. सिंह, एन. सिंह एवं सी. कपूर, अरहरः आर.एस. राजे, रामप्रभात जी. एवं कुमार दुर्गेश
मूँगः एच.के. दिक्षित, डी. सिंह, जी.पी. मिश्र, एम. अस्की एवं एस. गुप्ता
सोयाबीनः एस.के. लाल, ए. तालुकदार, अम्बिका आर. एवं एम. सैनी
आनुवंशिकी संभाग

पूसा संस्थान के नाम से प्रसिद्ध भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (भा.कृ.अ.सं.) अनुसंधान, शिक्षा एवं प्रसार के क्षेत्र में भारतीय कृषि अनुसंधान परिशद के अर्न्तगत कार्यरत देश का एक अग्रणी संस्थान है। इसे हरित क्रांति की जन्मस्थली के नाम से भी जाना जाता है। इस संस्थान का आनुवंशकी संभाग फसलों की उच्च उपज देने वाली उन्नत किस्मों के विकास के लिए देश भर में जाना जाता है। ये किस्में देश की 'खाद्य एवं पोषण सुरक्षा' में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं तथा किसानों की आय बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुई है। भा.कृ.अ.सं. द्वारा विकसित फसलों की उन्नत किस्मों के बीज की मांग किसानों में इस संस्थान की लोकप्रियता का प्रमाण है। वर्ष 2014–24 के दौरान भा.कृ.अ.सं. ने विभिन्न 6 खरीफ फसलों में कुल 54 किस्मों और संकर प्रजातियों का विकास किया है। उच्च उपज के अलावा ये नवीन किस्में, बीमारियों एवं कीटों के लिए प्रतिरोधक, कम नमी तथा उच्च तापमान के प्रति सहनषील एवं उच्च गुणवत्ता वाली हैं। संस्थान द्वारा बाजरा, अरहर, मूँग एवं सोयाबीन की उन्नत किस्मों का विवरण निम्नलिखित हैः

बाजरा

1. **पूसा कम्पोजिट 701: क्षेत्रः** राजस्थान, गुजरात, हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** वर्षा आधारित एवं सिंचित, **औसत पैदावारः** 23.5 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 80 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** डाउनी मिल्डयू के लिए उच्च प्रतिरोधी, उच्च लौह तत्व (48 पी.पी.एम.) एवं ज़िंक (41 पी.पी.एम.)।
2. **पूसा 1201 (संकर): क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 28.1 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 80 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** डाउनी मिल्डयू एवं ब्लास्ट के लिए उच्च प्रतिरोधी, उच्च लौह तत्व (55 पी.पी.एम.) एवं ज़िंक (48 पी.पी.एम.)।
3. **पूसा 1801 (संकर): क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 33.3 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 83 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** डाउनी मील्ड्यू, ब्लास्ट, दाना अर्गट, स्मट और रतुआ रोग के प्रति अत्यधिक प्रतिरोधी है, उच्च लौह तत्व (70 पी.पी.एम.) एवं ज़िंक 57 पी.पी.एम.)।

अरहर

1. **पूसा 991: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 16.5 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 142 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** जल्दी पकने वाली एवं अरहर–गेहूँ फसल–चक्र हेतु उपयुक्त।
2. **पूसा 992: क्षेत्रः** उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 16.5 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 140 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** अर्ध–फैलाव एवं जल्दी पकने वाली एवं अरहर–गेहूँ फसल–चक्र हेतु उपयुक्त।
3. **पूसा 2001: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 18.7 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 140 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** जल्दी पकने वाली, मानसून से पूर्व बुआई हेतु उपयुक्त, उकठा, ब्लाइट एवं स्टेरिलिटी मौजेक रोगों के प्रति सहनशील।
4. **पूसा 2002: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 17.7 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 143 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** अर्ध–फैलाव एवं जल्दी पकने वाली एवं अरहर–गेहूँ फसल–चक्र हेतु उपयुक्त।
5. **पूसा अरहर 16: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 19.8 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 120 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** अति शीघ्र पकने वाली किस्म, सरसों, गेहूँ, आलू की अनुगामी फसल हेतु, आसान छिड़काव एवं उच्च घनत्वरोपण के लिए उपयुक्त।

6. **पूसा अरहर 2017.1: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 21.1 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 122 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** शीघ्र पकने वाली किस्म, मध्यम टाइप, सघन सेमी–इरेक्ट प्लांट टाइप, उच्च घनत्वरोपण एवं एकल फसल के लिए उपयुक्त।
7. **पूसा अरहर 2018.2: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 20.9 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 133 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** शीघ्र पकने वाली किस्म, मध्यम टाइप, सेमी–इरेक्ट, सघन प्लांट टाइप ।
8. **पूसा अरहर 2018.4: क्षेत्रः** उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 16.7 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 143 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** मोटा दाना एवं प्रोटीन (22.8%)।
9. **पूसा अरहर संकर 5 (पूसा अरहर यमुना): क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 23.4 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 140 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** 100 बीजों का भार 8.77 ग्राम एवं फाइटोपथोरा तना झुलसा रोग प्रतिरोधी।

मूँग

1. **पूसा विशालः क्षेत्रः** उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र, **ऋतुः** वसंत, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 11.5 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 65 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** एम.वाई.एम.वी प्रतिरोधी, समकालिक परिपक्वता एवं मोटे बीज।
2. **पूसा 9531: क्षेत्रः** उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र एवं मध्य क्षेत्र, **ऋतुः** वसंत, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 11.5 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 65 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** एम.वाई.एम.वी प्रतिरोधी, समकालिक परिपक्वता।
3. **पूसा 1431: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, **ऋतुः** वसंत, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 12.9 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 66 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** एम.वाई.एम.वी, सरकोस्पोरा लीफ स्पाट, वैब ब्लाइट एवं एन्थ्राकनोज प्रतिरोधी, औसत प्रोटीन (25.4%) तथा 100 दानों का वजन 4.7 ग्राम।
4. **पूसा 1641: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, **ऋतुः** वसंत, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 13.1 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 63 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** उत्तरी भारत के क्षेत्रों में एम.वाई.एम.वी, प्रतिरोधी, 50% पुष्पन बुवाई के 36 दिन बाद तथा 100 दानों का वजन 4.2 ग्राम।
5. **पी एम डी–9: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, **ऋतुः** ग्रीष्म, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 10.8 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 61 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** एम वाई एम वी, लीफ कर्ल वायरस, एन्थ्रेक्नोज, वेब ब्लाइट एवं उड़दबीन लीफ क्रिंकल्स के प्रति प्रतिरोधी तथा सूखे की स्थिति में मध्यम सहनशील।
6. **पी एम डी–10: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, **ऋतुः** ग्रीष्म, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 11.1 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 60 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** एम वाई एम वी, लीफ कर्ल वायरस, एन्थ्रेक्नोज, वेब ब्लाइट एवं उड़दबीन लीफ क्रिंकल्स के प्रति प्रतिरोधी तथा सूखे की स्थिति में मध्यम सहनशील।
7. **पी एम एस–8: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, **ऋतुः** ग्रीष्म, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित लवणीय मिट्टी, **औसत पैदावारः** 5.57 क्विं/हे. नमक प्रभावित परिस्थितियों में, **परिपक्वताः** 70 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** एम वाई एम वी, लीफ कर्ल वायरस, एन्थ्रेक्नोज, वेब ब्लाइट एवं उड़दबीन लीफ क्रिंकल्स के प्रति प्रतिरोधी।

सोयाबीन

1. **पूसा सोयाबीन 9712: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 22.5 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 115 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** मूंगबीन येलो मोजेक वाइरस प्रतिरोधी।
2. **पूसा 12: क्षेत्रः** उत्तरी मैदानी क्षेत्र, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 22.9 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 128 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** मूंगबीन येलो मोजेक वाइरस, राइजोक्टोनिया ब्लाइट प्रतिरोधी।
3. **पूसा सोयाबीन 6: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 21.4 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 116 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** मूंगबीन येलो मोजेक वाइरस, राइजोक्टोनिया ब्लाइट एवं बैक्टीरियल पसचुलस प्रतिरोधी, स्टेम फ्लाई एवं पत्तिखादक कीटों के प्रति के लिए मध्यम अवरोधी, पीले रंग के दाने एवं तेल की मात्रा 20.7%।
4. **पूसा सोयाबीन 21: क्षेत्रः** राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली, **ऋतुः** खरीफ, **उत्पादन परिस्थितिः** सिंचित, **औसत पैदावारः** 12.3 क्विं/हे., **परिपक्वताः** 113 दिन, **मुख्य विशेषताएंः** यह पूसा सोयाबीन 9712 का उन्नत किस्म, मूंगबीन येलो मोजेक वाइरस एवं सोयाबीन मोज़ेक वायरस के प्रति अत्यधिक प्रतिरोधीए तथा तना मक्खी के प्रति सहनशील है।

“किण्वित जैविक खाद (FOM) अपनाएँ,
मृदा को स्वस्थ बनाएँ।”